IX 9Marks स्वस्थ कलीसियाओं का निर्माण

कलीसिया का अनुशासन

कलीसिया यीशु के नाम की किस प्रकार रक्षा करती है

जोनाथन लीमैन

1

"लीमैन हमारे जीवनों के गंदे वस्त्रों को प्रकट करते हैं और बताते हैं कि उसे कैसे साफ करना चाहिए। वे पासबानीय प्रयोग के मुश्किल क्षेत्र में कदम रखने का साहस करते हैं, जो निश्चित रूप से उत्तम चर्चा को प्रेरित करेगा, परंतु मैंने बार–बार खुद को विश्वास दिलाते हुए पाया है। आप इस पुस्तक से सहायता प्राप्त करने से नहीं चुकेगें। संक्षिप्त और बाइबल आधारित, बुद्धिमानीपूर्ण और व्यावहारिक कलीसियाई अनुशासन की इस पुस्तक की खोज में आप थे।"

मार्क डेव्हर, वरिष्ठ पासबान कैपिटल हिल बैप्टिस्ट चर्च, वॉशिंग्टन, डी सी

"आज कलीसियाई अनुशासन पर बहुत कम पुस्तकें प्रकाशित हुई हैं जो बाइबल पर आधारित, पासबान की दृष्टि से संवेदनशील हैं। मैं ऐसे किसी पुस्तक के विषय में नहीं जानता जो टीका की दृष्टि से सही, व्यावहारिक दृष्टि से प्रसंगोचित्त, विभिन्न प्रकार की आम परिस्थितियों से कलीसिया को कैसे व्यवहार करना चाहिए इसके वास्तविक जीवन के उदाहरणों से परिपूर्ण है। इन सबके अलावा, लीमैन संक्षिप्त और अत्यंत स्पष्ट रीति से लिखते हैं। इसकी हम पूरे मन से सिफारिश करते हैं!"

क्रेग ब्लॉमबर्ग, नए नियम के प्रख्यात प्राध्यापक, डेन्व्हर सेमिनरी

"यह पुस्तक उत्कृष्ट, अद्वितीय धर्म–सैद्धांतिक कार्य है। लीमैन ने दिखाया है कि कलीसियाई अनुशासन शिष्य बनाने की प्रक्रिया का अत्यावश्यक पहलू है, और इस प्रकार प्रत्यक्ष सुसमाचार प्रचार का विस्तार है। वे दिखाते हैं कि 'मसीह पर विश्वास करनेवाले

लोगों के निर्णयों की संख्या' पर हमारा अत्यंत संकुचित लक्ष्य वास्तव में जीवन की ओर ले जाने वाले पश्चाताप की ओर लोगों का मार्गदर्शन करने से हमें रोकता है। मेरा विश्वास है कि कलीसियाई अनुशासन पर यह सर्वोत्तम कार्य होगा और हमारे प्राचीन हमारे मार्गदर्शक के रूप में इस पुस्तक का उपयोग करने की योजना बना रहे हैं।"

जे डी ग्रियार, मुख्य पासबान, समिट चर्च, डरहैम, उत्तरकैरोलिना।

"आज कलीसिया में सर्वाधिक उपेक्षित गतिविधियों में से एक है प्रेमपूर्ण, साहसी, और उद्धारदायक कलीसियाई अनुशासन। यह पुस्तक मसीह की देह में जीवन के इस अत्यावश्यक पक्ष के लिए स्पष्ट दृष्टि और व्यावहारिक मार्गदर्शन प्रदान करती है। इन सिद्धांतों पर जीवन बिताने वाली कलीसियाओं के द्वारा मैंने कई लोगों को उलझाने वाले पापों से मुक्त होते हुए देखा है, और मैं प्रार्थना करता हूं कि अधिकाधिक कलीसियाएं इस पुनर्स्थापक सेवकाई के प्रति स्वयं का पुनःसमर्पण करेगी।"

केन सेंड, अध्यक्ष, पीसमेकर मिनिस्ट्रीज

"जब तक हमारी कलीसिया प्रभु यीशु मसीह की कलीसिया के रूप में, तात्विक रूप से, अनुशासित कलीसिया नहीं बनती, तब तक वह बड़े पैमाने पर अनुशासनहीन कलीसिया बनी रहेगी। 9मार्कस् के सेवक लीमैन ने "अद्वितीय मसीही जिम्मेदारियों, प्रेम, और अनुशासन के अभ्यास के माध्यम से स्वस्थ कलीसिया स्थापित करने हेतु अनुबोधक और महत्वपूर्ण मार्गदर्शन प्रदान किया है। वे पासबान जो स्वस्थ कलीसिया देखने की इच्छा रखते है वे इस लेख के वाचन से बहुत लाभ पाएंगे।" **पेज पैटरसन,** अध्यक्ष, दक्षिण–पश्चिम बैप्टिस्ट थियोलॉजिकल सेमिनरी

"जोनाथन लीमैन समकालीन कलीसिया के विचारशील पाठक बन गए हैं। उन्होंने इस पुस्तक में कलीसियाई अनुशासन पर अत्याधिक आवश्यक बुद्धिमानीपूर्ण परामर्श के साथ बाइबल की सच्चाईयों को जोड़ दिया है। यदि आप अपनी कलीसिया में इस विषय से डरते हैं या अनिश्चित हैं कि कैसे प्रेम के साथ पाप करने वाले सन्तों को सुधारें, तो यह पुस्तक उस विषय में बाइबल से दलील और व्यावहारिक परामर्श प्रदान करती है जिसकी उत्तम शुरूवात की आपको ज़रूरत है। यह पुस्तक आपकी कल्पना को प्रज्वलित करेगी, आपकी आत्मा को उत्तेजित करेगी और आपके मार्ग को प्रकाशित करेगी।"

थ्याबिती अन्याबविले, वरिष्ठ पासबान, फर्स्ट बैप्टिस्ट चर्च ऑफ ग्रैन्ड केमन; लेखक, वॉट इज़ ए हेल्दी चर्च मेंबर?

5

स्वस्थ कलीसियाओं का निर्माण

कलीसिया का अनुशासन

जोनाथन लीमैन

Church Discipline: How the Church Protects the Name of Jesus (Hindi)

Copyright © 2012 by Jonathan Leeman
Published by 9Marks (https://9marks.org/):

525 A Street NE
Washington, DC 20002

All rights reserved. *No part of this publication may be reproduced, stored in a retrieval system, or transmitted in any form by any means, electronic, mechanical, photocopy, recording, or otherwise, without the prior permission of the publisher, except as provided for by USA copyright law.*

First printing, 2012. Printed in the United States of America.
Copyright © 2016
Translated and Published in Hindi by 9Marks in cooperation with Alethia Publications (alethiapublications@gmail.com):

Chandra Niwas Building, Bitco Point,
Nashik Road 422101, Maharashtra

Translated by Abha Benjamin

Cover design: Dual Identity inc.
Cover image(s): Illustration by Wayne Brezinka for brezinkadesign.com.

Unless otherwise indicated, Scripture quotations are from the ESV® Bible, copyright © 2001 by Crossway. Used by permission. All rights reserved. Scripture references marked NIV are taken from the Holy Bible, New International Version® . Copyright © 1973, 1978, 1984 Biblica. Used by permission of Zondervan. All rights reserved. The NIV and New International Version trademarks are registered in the United States Patent and Trademark Office by Biblica. Use of either trademark requires the permission of Biblica.

विषय–सूची

श्रृंखला आमुख 9

भूमिका : दो सुसमाचारों की कथा 11

परिचय : अनुशासन के लिये रूपरेखा 17

भाग 1 : ढ़ांचा स्थापित करना

1. अनुशासन के लिये बाइबल के मूल तत्व 29

2. अनुशासन को समझने के लिये एक सुसमाचारिय संरचना 41

3. अनुशासन कब आवश्यक है? 55

4. एक चर्च किस प्रकार चर्च अनुशासन का अभ्यास करता है ? 79

5. पुनःस्थापन का कार्य कैसे होता है? 95

भाग 2 : ढ़ांचा लागू करना : मामलो का अध्ययन

6. व्यभिचारी 107

7. लत 111

8. कानून तोड़ने वाली स्थिति का ''समाचार जोरों'' पर था 117

9. कुचले हुए सरकण्डे 121

10. अनुपस्थित सदस्य 125

11. विश्वासपूर्वक उपस्थित परंतु विभाजक व गैर सदस्य वाली स्थिति 129

12. सुरक्षा की दृष्टि से पदत्याग 135

13. नया नया प्रकट अविश्वासी 139

14. परिवार के सदस्य की स्थिति 143

भाग 3: प्रारंभ करना

15. इसके पूर्व जब आप अनुशासन सिखाते हैं, शिक्षा दीजिये 149

16. अनुशासन के पहले, संगठित करें 159

निष्कर्ष 163

परिशिष्ठ 167

9

श्रृंखला आमुख

क्या आप मानते हैं कि एक स्वस्थ कलीसिया बनाना आपकी जिम्मेदारी है? अगर आप एक मसीही हैं तो हम समझते हैं कि यह आपकी जिम्मेदारी है।

यीशु आप को शिष्य बनाने की आज्ञा देते हैं (मत्ती 28 :18–20)। यहूदा आप को विश्वास में बने रहने की आज्ञा देता है (यहूदा 20–21)। पतरस आप को आप के वरदानों द्वारा दूसरों की सेवा किये जाने के लिए कहता है (1 पतरस 4:10)। पौलुस आप को प्रेम में सत्य बोलने के लिये कहता है ताकि आप की कलीसिया का पूर्ण विकास हो सके (इफिसियों 4:13, 15)। क्या आप जानते हैं कि इन सब के बीच हमारा स्थान कहां है?

चाहे आप कलीसिया के सदस्य या अगुवे हों, स्वस्थ कलीसियाओं का निर्माण करने वाली इन पुस्तकों की श्रृंखला का उद्देश्य बाइबल की इन आज्ञाओं को पूर्ण करने में आप की सहायता करना है ताकि आप ऐसे चर्च के निर्माण में अपनी भूमिका का निर्वाह कर सकें। कहने का दूसरा तरीका यह हो सकता है कि हम आशा करते हैं कि जैसे यीशु आप की कलीसिया से प्रेम रखते हैं, ये पुस्तकें कलीसिया के प्रति वैसा ही प्रेम रखने में आप की सहायता करेंगी।

9मार्क्रस् प्रकाशन की योजना है कि एक स्वस्थ कलीसिया के जो 9 चिन्ह होते हैं उनमें से प्रत्येक के उपर एक लघु व पठनीय पुस्तक और साथ ही ठोस सिद्वांतों के उपर भी एक पुस्तक तैयार करे। व्याख्यात्मक प्रचार वाली पुस्तकें, बाइबल के धर्मसिद्धांत, कलीसिया की सदस्यता, कलीसियाई अनुशासन, शिष्यता और उसमें बढ़ना व कलीसिया की अगुवाई इत्यादि विषयों की पुस्तकों की ओर देखते रहिये।

स्थानीय कलीसिया इसलिये अस्तित्व में हैं कि वे देश–देश के लोगों को

परमेश्वर की महिमा प्रगट करें। हम यीशु मसीह के सुसमाचार की ओर आंखे लगाने के द्वारा, उनसे उद्धार मिलने की आशा के द्वारा, परमेश्वर की पवित्रता, एकता और प्रेम में होकर एक दूसरे से प्रेम रखने के द्वारा उनकी महिमा प्रगट कर सकते हैं। हम प्रार्थना करते हैं जो पुस्तक आप के हाथ में हैं, वह आप की सहायता करेगी।

इसी आशा के साथ,
मार्क डिवर एवं जोनाथन लीमैन
श्रृंखला संपादक

भूमिका

दो सुसमाचारों की कथा

आप कौन से ''सुसमाचार'' में विश्वास करते हैं? इस प्रश्न का उत्तर सीधे इस बात को प्रगट करेगा कि आप चर्च अनुशासन के बारे में क्या सोचते हैं। तो इसके पहले कि हम किसी और विषय पर बात करें, यह निश्चित कर लेना आवश्यक होगा कि हम एक ही सुसमाचार की बात कर रहे हैं। यहां सूक्ष्म रूप में भिन्न दो सुसमाचार संस्करण उपलब्ध हैं। प्रथम संस्करण शायद ही किसी चर्च अनुशासन की बात करेगा। दूसरा संस्करण इस चर्चा को आरंभ करेगा।

सुसमाचार 1: परमेश्वर पवित्र है। हम सभी ने पाप किया है, जो हमें परमेश्वर से अलग करता है। परंतु परमेश्वर ने अपने पुत्र को क्रूस पर मरने भेजा और वे पुर्नजीवित हुए ताकि हमें पापों की क्षमा मिल सके। प्रत्येक जन जो यीशु पर विश्वास रखता है, उसे अनंत जीवन प्राप्त हो सकता है। हम कार्यो से धर्मी नहीं ठहरते हैं। हम केवल विश्वास रखने से धर्मी ठहरते हैं। इसलिये सुसमाचार सब लोगों को आह्वान देता है कि केवल विश्वास रखो! एक बेपरिमाण प्रेमी परमेश्वर हम जिस भी रूप में पाये जाते हैं हमसे वैसे ही प्रेम रखता है।

सुसमाचार 2: परमेश्वर पवित्र है। हम सभी ने पाप किया है, जो हमें परमेश्वर से अलग करता है। परंतु परमेश्वर ने अपने पुत्र को क्रूस पर मरने भेजा और वे पुर्नजीवित हुए ताकि हमें पापों की क्षमा मिल सके। हम उसके पुत्र का एक राजा और प्रभु के रूप में अनुसरण कर सकें। हर एक जन जो पश्चाताप करता और विश्वास रखता है उसे अनंत जीवन प्राप्त हो सकता है। वह जीवन जो आज प्रारंभ होकर अनंत काल तक चलता है। हम कार्यो से धर्मी

नहीं ठहरते हैं। हम केवल विश्वास रखने से धर्मी ठहरते हैं, पर वह कार्यरत विश्वास कभी भी अकेला नहीं होता। इसलिये सुसमाचार सब लोगों को आह्वान देता है कि ''पश्चाताप करो और विश्वास रखो।'' बिना किसी शर्त प्रेम रखने वाला परमेश्वर आप जिस व्यवहार के लायक हैं, उसके ठीक विपरीत, आप से व्यवहार करेगा और अपनी आत्मा की सामर्थ द्वारा आप को इस योग्य बनायेगा कि आप उसके पुत्र के समान पवित्र और आज्ञाकारी बन सकें। अगर आप स्वयं से मेलमिलाप कर लेते हैं तो परमेश्वर आप का मेलमिलाप उसके परिवार से, उसके चर्च से करवायेगा और आप को अपने लोगों के रूप में प्रस्तुत करेगा ताकि आप उसके पवित्र व्यक्तित्व और त्रिएकत्व महिमा, दोनों को साथ साथ प्रस्तुत कर सकें। तो इस विषय में आप क्या सोचते हैं? इन दोनों प्रकार के सुसमाचारों में से कौन सा सुसमाचार, बाइबल के अनुरूप शिक्षा को प्रगट करता है?

प्रथम संस्करण मसीह के मसीहा वाले स्वरूप पर बल देता है। द्वितीय संस्करण मसीह के मसीहा और प्रभु होने पर बल देता है।

प्रथम संस्करण मसीह की नयी वाचा में निहित क्षमा पर बल देता है। द्वितीय संस्करण नयी वाचा में निहित क्षमा व पुनरूद्धार दोनों पर बल देता है।

प्रथम संस्करण मसीहियों के परमेश्वर की संतान कहलाये जाने के दर्जे की ओर संकेत देता है। द्वितीय संस्करण इस नये प्राप्त दर्जे और मसीह के राज्य में उसके नागरिक के रूप में जो नया कार्य सौंपा गया है, दोनों की ओर संकेत देता है।

प्रथम संस्करण एक मसीही जन का मसीह के साथ मेलमिलाप के उपर बल देता है। द्वितीय संस्करण एक मसीही जन का मसीह के साथ व उसके लोगों के साथ मेलमिलाप रखने पर बल देता है।

अगर सुसमाचार के विषय में आप की समझ पहले संस्करण के साथ ही थम गई तो चर्च अनुशासन के विषय या इस पुस्तक का आप अधिक उपयोग नहीं कर पायेंगे। लेकिन अगर आप दूसरे संस्करण को ग्रहण करते हैं तो आप से लंबी चर्चा हो पाना संभव है। बाइबल में इसकी सुस्पष्ट आज्ञा दिये जाने के अलावा, दूसरे संस्करण का आशय चर्च अनुशासन भी है। लेकिन इससे अधिक भी कुछ कहना है। मेरा मानना है कि द्वितीय संस्करण बाइबल में निहित सुसमाचार का सुदृढ़ विवरण प्रस्तुत करता है और अनुग्रह के उस रूप की समझ को विकसित करता है जो मसीहियों को उनका क्रूस उठा कर चलने और यीशु के पवित्र मिशन का अनुसरण करने के लिये तैयार करती है।

चर्च अनुशासन के प्रति दो प्रतिक्रियाएं

मेरा अनुमान है कि पिछली शताब्दी में अनेक चर्च अगुओं ने सुसमाचार 2 के अतिरिक्त तथ्यों में विश्वास प्रगट किया होगा, कम से कम, जब वे टेस्ट उत्तर पुस्तिका में अपनी नंबर 2 पेंसिल से गोले लगा रहे होंगे। परंतु पुल्पिट से उन्होनें इसे प्रचार नहीं किया होगा। ऐसा उन्होनें श्रीमान और श्रीमती जोंस से नहीं कहा होगा जो अपने छ वर्षीय बेटे जॉनी को बपतिस्मा दिलवाने के लिये उनके आफिस में लेकर आये होंगे। चर्च के अगुए बाहरी लोगों तक पहुंचना चाहते हैं पर उनकी यह भली इच्छा बुरा प्रलोभन उत्पन्न करती है – कि वे सुसमाचार के अर्थ को निहायत सीमित कर देते हैं। परमेश्वर के अनुग्रह, उसके बेपरिमाण प्रेम

और विश्वास की बातें करना अपेक्षाकृत सरल लगता है। परंतु परमेश्वर की पवित्रता, मसीह की प्रभुता, आत्मा द्वारा प्रदत्त प्रायश्चित और चर्च की वास्तविक नयी वाचा की बातें करना कठिन लगता है। ये सारी बातें एक व्यक्ति से कुछ मांग करती है। ये सारी बातें व्यक्ति से उत्तरदायित्व के निर्वाह की मांग करती है। जब आप चर्च को ऐसे सुसमाचार पर आधारित बनाते हैं जो व्यक्ति से थोड़ी मांग और अल्प जिम्मेदारी का निर्वहन करने को कहता है तो वहां चर्च अनुशासन उनको इतना भारी नहीं लगता है।

एक ऐसी कलिसिया का चित्रण सोचिये जिसे केवल उस आत्मिक दूध का पोषण दिया गया हो "जिसमें सिर्फ विश्वास रखिये" और "परमेश्वर का प्रेम बेपरिमाण है" जैसी शिक्षा सम्मिलित हो। मान लीजिये आप इस कलीसिया को बताते हैं कि आप को छोटे जॉनी को चर्च की सदस्यता से इसलिये बेदखल कर देना चाहिये क्योंकि अब वह छः वर्ष का बालक नहीं रहा परंतु बीस का हो गया है और उसने दो साल पहले स्नातक होने पर भी चर्च के दरवाजों पर रंग रोगन नहीं किया। ऐसा कहकर आप कलीसिया को उलझा देंगे, मसीहत के प्रति उनकी जो समझ है, आप उसके ठीक विपरीत कार्य करेंगे जैसे कोई अपनी कार को सामने से आते हुए ट्रैफिक में ही मोड़ देता हो।

"आप न्यायी बन बैठते हैं।" "कैसे एक बिना शर्त प्रेम रखने वाला परमेश्वर किसी को अनुशासित करेगा?" "यह तो कानून के समान लगता है। हम तो विश्वास से बचाये जाते हैं, न कि कार्यो से!" "एक बार बचाये गये हैं अर्थात सदा के लिये बचाये गये हैं।"

दूसरे शब्दों में, आप इन विचारों से भर जाते हैं। अब एक दूसरी कलीसिया का चित्रण कीजिये, जिसके अगुओं ने अपने सदस्यों को परमेश्वर की संपूर्ण सम्मति से सुसमाचार का

प्रयोग करना सिखाया हो। इन सदस्यों को विश्वास करने से पहले यीशु के पीछे चलने की कीमत बतायी होगी। उन्होंने यह शिक्षा सुनी होगी कि स्वर्ग का राज्य आत्मा में दीन, हृदय से शुद्व और मेलमिलाप करने वाले लोगों का होता है (मत्ती 5:4–9) उन्होनें यह सुना होगा कि स्वर्गिक पिता मसीह की दाखलता की हर उस शाखा को काट डालेगा जो फल नहीं लाती है क्योंकि सच्चा सुसमाचार वास्तव में लोगों को बदलता है (यूहन्ना 15:2)। उन्होनें संसारी दुख और ईश्वरीय शोक के बारे में सुना होगाः जिसमें एक व्यक्ति को अपने प्रति ग्लानि होती है। संसारी प्रकार के दुख में अधीरता, क्रोध, भय, ललक और आवेश समाया होता है (2 कुरूंथियों 7:10–11) ।

दूसरे प्रकार की कलीसिया यह बहुत अच्छे ढंग से समझती है कि परमेश्वर पुत्र वास्तव में लोगों को उनके जीवन और वृद्वि के लिये स्वयं से और अपने परिवार से जोड़ते हैं। परमेश्वर पवित्र आत्मा वास्तव में लोगों के भीतर एक नया अस्तित्व उत्पन्न करता है, जो सच्चे मसीही को बदल कर रख देता है। इस कलीसिया के सदस्यों को कहिये कि बीस साल का जॉनी दो सालों से चर्च नहीं आप रहा है। यह सुनकर वे अपने कंधे सिकोड़ते हुए आहें भरते हुए यह नहीं कहेंगे कि ''वह एक बार बचाया गया तो सदा के लिये बचा रहेगा'' और वे अपने आराधना के गीत गाने में मशगूल नहीं हो जायेंगे। बल्कि वे फोन उठायेंगे और जॉनी की तलाश करेंगे, उसको दोपहर के भोजन के आमंत्रण दिये जाने के लिये पूछेंगे, वह कैसा है यह जानने का प्रयास करेंगे। वे उसे मसीही होने की जिम्मेदारी का स्मरण दिलायेंगे। सारे प्रयासों के उपरांत अंत में वे उसे सदस्यता से निकाल भी सकते हैं। वे उससे प्रेम रखते हैं लेकिन यह नहीं चाहते कि वह मसीही उत्तरदायित्व भूल जाये। वे उसके गैर

मसीही मित्रों और सहकर्मियों से प्रेम करते हैं लेकिन उससे मसीहत के निर्वाह की मांग करते हैं।

नमक और प्रकाश

यह परमेश्वर का वचन है जो आत्मिक रूप से मृत व्यक्ति को जीवन प्रदान करता है। परंतु परमेश्वर चाहता है कि उसका वचन लोगों के परिवर्तित जीवन की पृष्ठभूमि बना रहे। परिवर्तित जीवन चर्च की गवाही को जीवंत और आकर्षक बनाता है। संसार मसीहत की परछाई नहीं देखना चाहता है। वह प्रकाशमान और विशिष्ट स्वाद लिये, कुछ अलग जीवन देखना चाहता है

> तुम पृथ्वी के नमक हो, परन्तु यदि नमक का स्वाद बिगड़ जाए, तो वह फिर किस वस्तु से नमकीन किया जाएगा? फिर वह किसी काम का नहीं, केवल इस के कि बाहर फेंका जाए और मनुष्यों के पैरों तले रौंदा जाए। तुम जगत की ज्योति हो, जो नगर पहाड़ पर बसा हुआ है वह छिप नहीं सकता। और लोग दिया जलाकर पैमाने के नीचे नहीं परन्तु दीवट पर रखते हैं, तब उस से घर के सब लोगों को प्रकाश पहुंचता है। उसी प्रकार तुम्हारा उजियाला मनुष्यों के साम्हने चमके कि वे तुम्हारे भले कामों को देखकर तुम्हारे पिता की, जो स्वर्ग में हैं, बड़ाई करें (मत्ती 5:13–16)।

नमक उपयोगी है क्योंकि यह कुछ विशिष्ट वस्तु है। अंधेरे में खड़े लोगों के लिये प्रकाश आकर्षक है क्योंकि.....यह अंधेरा नहीं है।

17

परिचय

अनुशासन के लिये रूपरेखा

इस पुस्तक का मुख्य उद्देश्य आप को चर्च अनुशासन के लिये समझाना नहीं है। बल्कि इसका उद्देश्य पहले से ही समझ प्राप्त लोगों को, कब और कैसे चर्च अनुशासन का अभ्यास करना है, उसको समझने में सहायक होना है। इन पंक्तियों के साथ यह देखना महत्वपूर्ण है कि कैसे यीशु मसीह का सुसमाचार चर्च अनुशासन को समझने के लिये धर्मशास्त्र आधारित संरचना प्रदान करता है। चर्च अनुशासन निर्माणात्मक और सुधारात्मक दोनों हैं। हम इसे अच्छी तरह से समझ पायेंगे अगर हम सुसमाचार की सहायता से इसे समझने का प्रयास करेंगे।

इसका अर्थ है चर्च अनुशासन के विषय पर मेरी पहुंच दूसरों से थोड़ी भिन्न है। चर्च अनुशासन पर पिछली शताब्दियों में जो लेखक हुये हैं उन्होंने बाइबल में से उन पापों की सूची बनायी है जो चर्च अनुशासन को न्यायसंगत ठहराते हैं। उसके पीछे चर्च अगुओं को एक आधारभूत मार्गदर्शन देने का विचार था ताकि वे स्वयं की कोई पास्तरीय विकट समस्या को जांचे। अनुशासन के उपर वर्तमान लेखकों द्वारा किया गया लेखन पाठकों को उन कदमों से होता हुआ ले चलता है जो यीशु ने मत्ती 18:15–20 में बतलाये थे। वे यह बताते हैं कि कैसे पापी जन के पास पहले अकेले में, फिर दो तीन के साथ, और फिर चर्च के लोगों के

साथ पहुंचा जाये। वे अलग अलग प्रकार के पाप पर कम ध्यान देते और मत्ती 18 में वर्णित विस्तारित पद्धति को सर्वाधिक उपयोगी मानते हैं।

इन दोनों पद्धतियों के लिये बहुत अनुशंसा की गयी है परंतु मेरी पद्धति अलग है। मैं एक धर्मशास्त्र आधारित संरचना स्थापित किये जाने की आशा रखता हूं जिसमें धर्मशास्त्रिय लेखकों ने अलग अलग पद्धतियों का वर्णन किया हो। 1 कुरूंथियों 5 में पौलुस ने अलग पद्धति अपनायी है, जो यीशु द्वारा बतायी मत्ती 18 की पद्धति से भिन्न है। पौलुस एक पापी को पहले ही, बिना चेतावनी दिये, सीधे चर्च से बाहर कर देने के लिये कहता है। ऐसा क्यों? कुछ लेखकों ने कहा है ऐसा इसलिये, क्योंकि पाप ''सार्वजनिक रूप से निंदात्मक'' है। पर इससे तो यह प्रगट होता है कि समाज में विकसित हो रहे नैतिक मापदंडों के आधार पर चर्च यह निर्णय दे कि कौन स्वर्ग के राज्य के उपयुक्त है या नहीं, यह मुझे जरा अजीब लगता है। क्या 1 कुरूंथियों 5 और मत्ती 18 में कोई धर्मशास्त्रिय संबंध नहीं है? मैं मानता हूं कि संबंध है और हम सुसमाचार के प्रकाश में चर्च अनुशासन को देखने का प्रयास करेंगे।

धर्मशास्त्र संरचना पर आधारित पद्धति अगुओं की सहायता करती है जो अनंत प्रकार की परिस्थितियों और पाप का सामना करते हैं, जहां किसी मामले विशेष का सटीक धर्मशास्त्रिय अध्ययन उपलब्ध नहीं होता हो – ऐसे पाप से सामना होता है जो किसी सूची में नहीं आते हों। अगर आपने कभी किसी पास्टर के रूप में या किसी आम मनुष्य के रूप में समय व्यतीत किया हो तो आप जानते होंगे कि पापी आप के और मेरे समान अनवरत रूप में बहुत रचनात्मक होते हैं। लोग अपने पाप को सदैव एक ही विधि से तैयार नहीं करते हैं। हर अरूचिकर सामग्री घर में ही तैयार की जाती है उसके स्वाद थोड़े अलग होते हैं। भाग 1

में मेरी भूमिका यह है कि मैं धर्मशास्त्रिय आधारित संरचना तैयार करना चाहता हूं जो चर्च अगुओं की सहायता उन अनेक परिस्थितियों का हल करने में करेगी जिनसे उनका सामना होता है।

कठिन प्रश्न

चर्च अनुशासन से संबंधित अनेक प्रकार के प्रश्न पास्टर्स हमसे पूछते हैं। मेरे ई मेल बाक्स में अभी अभी पूछे गये कुछ प्रश्न इस प्रकार हैं:

- क्या आप एक गैर सदस्य को अनुशासित कर सकते हैं? हमें क्या करना चाहिये अगर हमारे सदस्य विश्वास का परित्याग कर देते हैं और स्वयं को मसीही कहना बंद कर देते हैं?
- क्या चर्च को ऐसे किसी जन का त्यागपत्र स्वीकार करना चाहिये जो प्रायश्चित न किये जाने योग्य पाप में गिरा हो?
- चर्च से निकाले जाने के बाद अगर अन्य सदस्य उस व्यक्ति से अलग होने से इंकार करते हैं तो हमें क्या करना चाहिये?
- क्या हमें धन्यवादी आराधना वाला भोज परिवार के किसी अनुशासित किये गये सदस्य के साथ ग्रहण करना चाहिये?
- क्या किसी अनुशासित किये गये व्यक्ति को निरंतर चर्च आराधना में आने देना अनुशासन के नियम को अशक्त बनाता है?

20

- एक लंबे समय से गैर सदस्य के रूप में चर्च आने वाले विभाजक व्यक्ति के साथ हमें क्या करना चाहिये?
- एक लंबे समय से चर्च का सदस्य रहकर जो कभी चर्च नहीं आता हो और विभाजक हो तो उसके साथ क्या करना चाहिये?
- क्या गैर मसीही जन से विवाह अनुशासनात्मक अपराध है?
- क्या पेटुपन अनुशासनात्मक अपराध है?
- क्या भोजन में अरूचि या भोजन उगलना अनुशासनात्मक अपराध है?
- क्या पौलुस के उपर नये दृष्टिकोण पर विश्वास करना अनुशासनात्मक अपराध है?
- क्या अनुशासन के विभिन्न "स्तर" हैं? क्या चर्च को प्रायश्चित की श्रेणी में न आने वाले व्यभिचार को आदतन अनुपस्थित रहने वाले के समान ही प्रतिक्रिया देना चाहिये?
- क्या चर्च को गंभीर अपराध में लिप्त किशोर सदस्यों को अनुशासित करना चाहिये?
- किस बिंदु पर एक पास्टर को अनुशासित करना आवश्यक होता है? इस प्रक्रिया में मुख्य भूमिका किसे निभाना चाहिये?
- क्या एक अनुशासित किये गये व्यक्ति के साथ अन्य चर्च सदस्यों द्वारा व्यवहार रखने के लिये कुछ दिशा निदेश हैं?

- अधिक गंभीर और सार्वजनिक पापों के साथ क्या यह आवश्यक है कि कोई जन पूरी कलिसिया के समक्ष अपने प्रायश्चित के प्रमाण स्वरूप पाप का अंगीकार करे?
- हम कब एक बहिष्कृत जन का पुनः सहभागिता में स्वागत करेंगे? और कैसे?

एक अच्छी धर्मशास्त्रिय संरचना इन प्रश्नों के उत्तर देने में सहायक होती है। हम ये मानते हैं कि ये प्रश्न बहुत सीधे सीधे पूछे गये हैं और अपने अपने प्रयोजन में सीमित हैं। जब आप पाप की बहुत सारी परतों और परिस्थितियों को छीलना आरंभ करते हैं तो वास्तविक जीवन जीना दूभर हो जाता है। उस व्यक्ति का क्या होता है जो बिना कानून तोड़े अपने ग्राहकों के साथ धोखा करता है, दीवालिया हो जाता है, उन ग्राहकों से निवेदन करता है, यह कहता है कि उसे पश्चाताप है, परंतु उन ग्राहकों का पैसा लौटाने के कठिन कार्य में अल्प रूचि दिखाता है, चूंकि अब पैसा तो जा चुका है और वह अगले दस साल अपने जीवन में त्याग करते हुए नहीं बिताना चाहता है।

उस एकल मां के साथ क्या किया जाये जिसके तीन बच्चों के अलग अलग पिता हैं, जो उसकी अविवाहित दशा में ही जन्में हैं, जो अब किसी अन्य जन के द्वारा चौथे बच्चे को जन्म देने वाली है और जो पास्टर के आफिस में आकर फूट फूट कर रोती है? उसका ऐसा क्रंदन आप को बताता है कि क्या वह सच में प्रायश्चित कर रही है? उस शराबी जन का क्या किया जाये जिसके कुछ महिने बुरे और कुछ अच्छे निकलते हैं और जो सार्वजनिक तौर पर शराब पीने के जुल्म में गिरफ्तार होता है? कितना बुरा होगा कि एक पुलिस अधिकारी के साथ वाद विवाद हो जाये? और फिर इस ताजी घटना के कारण उस जन की नौकरी जाती रहे और उसकी पत्नी उससे अलग हो जाये? तो क्या हमें इन लोगों के साथ

और अधिक उदार हो जाना चाहिये? यहां एक परिस्थिति ऐसी उपस्थित होती है जिसमें चर्च के एक धर्मवृद्व जिनसे मैं कभी नहीं मिला, उन्होने मुझसे फोन पर पूछाः एक व्यक्ति की पत्नी किसी दूसरी महिला के साथ संबंध के कारण विश्वासघाती थी वह उसे तलाक देना चाहता था यद्यपि वह चाहती थी कि विवाह बना रहे; उस व्यक्ति के भी तलाक के पहले और उपरांत कई संबंध थे, अब ये सब बातें दो साल बाद, वरिष्ठ पास्टर की पुत्री के साथ उसकी सगाई के समय प्रकाश में आ रही थीं। आप ने उस समय क्या कहा होता? मेरा उत्तम उत्तर तो यही होता, "कि मुझे इस बारे में कुछ पता नहीं है परंतु मैं आप के लिये प्रार्थना करूंगा।" पर इन सब के पीछे मैं एक स्थिति का परीक्षण करने के लिये धर्मशास्त्रिय संरचना का उपयोग करता। इस पुस्तक के भाग 1 में मेरा उद्देश्य आप को इस संरचना को समझाना है ताकि आप चर्च में उपजने वाली ऐसी अनेक परिस्थितियों का निराकरण कर सकें।

रूढ़िवादी धर्म बनाम सुसमाचारीय विद्वता

कितना अच्छा होता कि जीवन में एक नियम पुस्तिका होती जिसमें सब कुछ स्पष्ट लिखा होताः "जब ऐसा हो तो आप को ऐसा करना चाहिये।" अगर आप एक माता पिता या पास्टर हैं तो आप मेरी बात को ठीक ठीक समझ सकते हैं कि कहने का मेरा आशय क्या है। यह जानना कि कब व कैसे अपने साथी विश्वासियों के पाप के प्रति प्रत्युत्तर देना ठीक ऐसा ही हैः "क्या कोई मुझे निश्चित समय बता सकता है कि कब मुझे बॉब को कुछ कहना है, या मुझे अपनी जुबान को बंद ही रखना है?"

रूढ़िवादी धर्म, अपने कठोरतम रूप में, और अधिक स्पष्टता की मांग करता है। जहां बाइबल खामोश है उन स्थानों पर वह स्पष्ट कहे जाने की इच्छा रखता है। जहां कुछ प्रमाण नहीं दिया जा सकता वहां यह निंश्चितता मांगता है। परमेश्वर हमेशा कुछ चीजों को अस्पष्ट क्यों छोड़ते हैं? मेरा अनुमान है, कि दूसरी चीजों के साथ साथ, वह हमसे चाहते हैं कि हम बुद्विमानी को खोजे क्योंकि स्वाभाविकतः हमारे जैसे आत्म निर्भर लोग परमेश्वर से विद्वता पाने की तीव्र आवश्यकता महसूस करते हैं। जीवन के नीरस क्षेत्र विश्वास की बढ़ोतरी के लिये प्रशिक्षण स्थल सिद्व होते हैं।

ऐसा कहा गया है कि परमेश्वर का वचन हमें विस्तृत दिशा निदेश या ऐसी रूपरेखा प्रदान करता है। हमारा कार्य है कि हम उन दिशा निदेश को समझे और उन्हें संवेदनशीलता के साथ अलग अलग परिस्थिति पर लागू करें, सदैव विश्वास में चलें, सदैव बुद्विमानी को खोजें। इस पुस्तक का भाग 2 यही प्रस्तुत करता है। यह किसी रूढ़िवादी व्यक्ति द्वारा लिखित नियमों की पुस्तिका नहीं है: "कि जब ऐसी स्थिति हो तो ऐसा करें।" इसके स्थान पर मेरा प्रयास है कि कैसे आधारभूत संरचना अलग अलग दृश्यों में लागू की जा सकती है ताकि आप को इस बात की बेहतर समझ हो सके कि ऐसी प्रक्रिया कैसी दिखाई देती है। जो निर्णय लिये गये हैं वे "अंतिम निर्णय" नहीं हैं वे मेरे और अन्य पास्टर्स के द्वारा सुसमाचारीय विद्वता को लागू करने के प्रयास हैं। भाग 1 के सिद्वांत स्थापित करने वाले अध्याय से बढ़कर, वे मुझे ऐसी सूक्ष्म अंतर वाली परिस्थितियों के उपयोग की भी अनुमति देते है।

उपर वर्णित उदाहरणों में से लेकर मैंने कुछ "मामलों को अध्ययन" के लिये लिया है जिसमें वास्तविक जीवन की परिस्थितियों के तथ्यों का समावेश है, जिसमें मैं सम्मिलित रहा हूं या

मैंने उनके बारे में सुना है। उन सभी में मैंने विवरण को कई तरह से बदल दिया है। पुस्तक का भाग 3 आप को चर्च की अगुवाई करने में औपचारिक चर्च अनुशासन के अभ्यास की ओर ले चलता हैः कि आप को अपनी कलिसिया को क्या सिखाने की आवश्यकता है और आप को उस स्थान तक पहुंचने में किन किन स्वरूप की आवश्यकता है।

क्या हमें अनुशासन का अभ्यास करना चाहिये?

क्या आप के चर्च को अनुशासन का अभ्यास करना चाहिये? हां, प्रथम बात तो यह है कि चर्च अनुशासन प्रेममय होता है। यह प्रगट करता है

- किसी व्यक्ति विशेष के प्रति प्रेम रखना, ताकि वह पुरूष या महिला को चेतावनी दी जा सके और उसे प्रायश्चित पर लाया जा सके;
- चर्च के प्रति प्रेम रखना, ताकि कमजोर भेड़ों को बचाया जा सके;
- हमें देखने वाले संसार के प्रति प्रेम रखना, ताकि वह मसीह की परिवर्तन करने वाली सामर्थ को देख सकें;
- मसीह के प्रति प्रेम रखना ताकि चर्चेस उनके पवित्र नाम को उंचा उठा सके और उनकी आज्ञा मान सकें।

अनुशासन से दूर रहने में, हम यह दावा करते हैं कि हम परमेश्वर से अधिक अच्छा प्रेम रखते हैं। परमेश्वर, आखिरकार, "जिनसे प्रेम रखता है उसको अनुशासित करता है," और "जिनकों वह अपने पुत्र के रूप में ग्रहण करता है उन्हें सजा भी देता है" (इब्रानियों 12:6, दपअ) । वह जानता है कि अनुशासन जीवन, वृद्वि और स्वास्थ्य देता हैः "परमेश्वर हमारे

लाभ के लिये ताड़ना देता है कि हम उसकी पवित्रता के भागी हो जायें" (इब्रानियों 12:10) । हां, यह कष्टप्रद है परंतु इसका परिणाम अच्छा आता है: "वर्तमान में हर प्रकार की ताड़ना आनंद की नहीं परंतु शोक की ही बात दिखाई देती है, तौभी जो इसको सहते सहते पक्के हो गये हैं, पीछे उन्हें चैन के साथ धर्म का प्रति फल मिलता है" (इब्रानियों 12:10) । क्या आप चैन व धर्म के प्रतिफल देख पाते हैं? यही वायदा परमेश्वर हमसे करता है। तो चर्च का अनुशासन प्रेम द्वारा प्रेरित होना चाहिये। क्या आप प्रेम रखते हैं? तो अनुशासित कीजिये। अनुशासन वह शब्द नहीं है जिसे दुनिया समझती है। प्रेम से अनुशासन सिखाने के अभियान को निश्चित ही यह संसार नहीं समझ सकेगा। यह तो बाइबल के मापदंड से सिखाये जाने वाली शिक्षा है। क्या आप इसकी सत्यता को समझते हैं? और अधिक ठोस रूप में कहें, तो चर्चेस को अनुशासन का अभ्यास करना चाहिये क्योंकि

- यह बाइबल पर आधारित है;
- बाइबल का यही तात्पर्य है;
- यह चर्च की आरोग्यता को बढ़ाता है;
- यह देशों के समक्ष चर्च की गवाहियों को स्पष्ट करता और झलकाता है;
- यह पापियों के सामने चेतावनी प्रगट करता है कि एक बड़ा न्याय आने वाला है;
- सर्वाधिक महत्वपूर्ण बात है कि यह संसार में यीशु मसीह के नाम और उनकी प्रतिष्ठा को बचाये रखता है।

26

यीशु ने अपना नाम चर्च से जोड़े रखा है। उन की प्रतिष्ठा हम से जुड़ी है। अजीब बात है न? अब, संपूर्ण बात अंततः हमारे कंधों पर ही नहीं टिकी है। उन्होंने पुराने नियम में इजरायल के जीवन द्वारा यह प्रगट किया है कि वह अपना नाम बचाने के लिये चाहे जो हो करेगा। तौभी, वह हमारे चर्चेस को एक कार्य करने को देता है कि उसके नाम और प्रतिष्ठा को राष्ट्रों के सामने बचाये रखें। हम चाहें इस बात को पसंद करें या नहीं, पर हमें देखकर संसार यीशु के बारे में निष्कर्ष निकालेगा। मूलभूत बात यह है कि चर्च अनुशासन का अर्थ है कि यीशु के प्रतिनिधि संसार में यीशु के नाम का प्रतिनिधित्व करें, न कि किसी और का। अगर आप को चर्च अनुशासन पर और अधिक समझाईश चाहिये, मैं आप को माक्र डेवर की नाईन मार्क्स ऑफ हैल्दी चर्च का अध्याय 7 पढ़ने की अनुशंसा करूंगा। अन्य दूसरी अच्छी पुस्तकें इस विषय पर हैं जैसे ट्रांसफार्मिंग कम्यूनिटी द्वारा माक्र लोटेबैक, वाकिंग टूगैदर द्वारा वीमैन रिचर्डसन, लव दैट रेस्क्यूज द्वारा एरिक बार्जरहफ और चर्च अनुशासन पर एक उम्दा पुस्तक है जो जै एडम्स द्वारा रचित है। मैं यह भी उम्मीद करता हूं कि निम्न लिखित कुछ अध्यायों की संपूर्ण संरचना प्रेरणादायक है। इसे यीशु के लोगों की उस तस्वीर को प्रगट करना चाहिये कि वे स्वभाववश यीशु के जैसे दिखाई देना सीख रहे हैं, ताकि उन्हें देखकर राष्ट्र चकित हो सकें।

भाग 1

ढ़ांचा स्थापित करना

अध्याय 1

अनुशासन के लिये बाइबल के मूल तत्व

चर्च अनुशासन क्या है? विस्तृत रूप में देखें तो चर्च अनु–शासन शिष्यता की प्रक्रिया का एक भाग है, वह भाग जहां हम पाप को सुधारते हैं और शिष्य को एक बेहतर मार्ग की और संकेत देते हैं। शिष्यता की प्रक्रिया में, *अनुशासित* की ओर करना भी सम्मिलित है। एक मसीही जन निर्देशों और सुधार के द्वारा अनुशासित किया जाता है, जैसे गणित की कक्षा में, अध्यापक पाठ सिखाता है और विद्यार्थी की त्रुटियों को भी सुधारता है।

इसी कारण से सदियों से यह अभ्यास प्रचलन में है कि निर्माणात्मक और सुधारात्मक अनुशासन दोनों की अनुशंसा की जाती रही है। निर्माणात्मक अनुशासन निर्देशों के माध्यम से शिष्य तैयार करने में सहायक होता है। सुधारात्मक अनुशासन शिष्य के पाप को सुधारने के द्वारा सहायक सिद्व होता है। यह पुस्तक सुधारात्मक अनुशासन पर केंद्रित है किंतु शिक्षा देना और सुधार करना सदैव साथ चलते हैं। यही शिष्यता का स्वभावगुण है।

विस्तारपूर्वक और सुव्यवस्थित रूप में, चर्च अनुशासन के अंतर्गत एक व्यक्ति को चर्च सदस्यता और प्रभु भोज ग्रहण करने से पृथक किया जाता है। पर इसके अंतर्गत उसे चर्च की सार्वजनिक सभाओं में आने से नहीं रोका जाता है। चर्च का एक प्रचलित कथन है कि वह किसी व्यक्ति को मसीही कहने के द्वारा उसके विश्वास के अंगीकार को पक्का नहीं ठहरा सकता। यह प्रभु भोज देने से किसी व्यक्ति को इंकार करना है। यह उसे सदस्यता से बहिष्कृत करना है या प्रभु भोज की संगति से पृथक करना है।

इसे अधिक स्पष्ट करते हुये, मैं समानार्थी रूप में इन शब्दों का अर्थ निकालूंगा : "सदस्यता से बहिष्कृत करने" का अर्थ "सहभागिता से अलग करना," जिसका अर्थ "प्रभु भोज ग्रहण करने से भी रोकना," है। प्रक्रिया में कुछ लोग इन दोनों बातों को अलग अलग स्तर पर लेते हैं; पर मैं नहीं लेता।

अनुशासन पर यीशु के विचार

नये नियम के कई पद चर्च अनुशासन के अभ्यास की ओर संकेत देते हैं। सबसे अधिक प्रचलित पद शायद मत्ती रचित सुसमाचार में है। यीशु ने कहा :

यदि तेरा भाई तेरा अपराध करे, तो जा और अकेले में बातचीत करके उसे समझाय यदि वह तेरी सुने तो तू ने अपने भाई को पा लिया। और यदि वह न सुने, तो और एक दो जन को अपने साथ ले जा, कि हर एक बात दो या तीन गवाहों के मुंह से ठहराई जाए। यदि वह उन की भी न माने, तो कलीसिया से कह दे, परन्तु यदि वह कलीसिया की भी न माने, तो तू उसे अन्य जाति और महसूल लेने वाले के ऐसा जान। (मत्ती 18:15–17)

सतही तौर पर, ऐसा प्रगट होता है कि यीशु के इसके पीछे दो प्रयोजन हैः प्रथम, कि पापी प्रायश्चित करे; द्वितीय, कि प्रायश्चित करवाने के कार्य में थोड़े ही लोग शामिल हो। इन प्रयोजनों के पीछे एक गहरी धारणा है कि चर्च को संसार से अलग दिखना चाहिये – मसीहियों को मूर्तिपूजकों या महसूल लेने वालों के समान जीवन नहीं बिताना चाहिये। मत्ती में वर्णित यहूदी दर्शक "मूर्तिपूजकों" को इस रूप में समझते थे कि जैसे वे वाचायुक्त समाज के बाहर के लोग हैं और "महसूल लेने वाले को" ऐसा मानते थे कि जिसने वाचायुक्त समाज

को धोखा दिया हो (और इसीलिये वे समाज से बाहर भी थे)। चर्च सदस्यों को संसार के तौर तरीकों से अलग हटकर रहना चाहिये। अनेक शालीनतापूर्ण चेतावनियों के उपरांत भी अगर वे नहीं सुनते हैं तो चर्च को उन्हें सहभागिता से पृथक कर देना चाहिये।

पाप को यहां अंर्तवैयक्तिक रूप में वर्णित किया गया है: "तुम्हारे विरूद्व।" तौभी मैं मानता हूं कि हम अक्सर इसके सविस्तार वर्णन पर कुछ अधिक जोर दे देते हैं। यहां मुद्दा यह हैं कि क्या वह व्यक्ति पश्चातापी है और क्या उसके साथ मसीही भाईचारे का व्यवहार करना चाहिये। इन पदों में जो बड़ी बात कही गयी है कि स्थानीय चर्चेस को अधिकार प्राप्त है कि वे विश्वास की स्वीकारोक्ति को जांचे और उसके अनुरूप व्यवहार करें: "यदि तुम में से दो जन इस पृथ्वी पर किसी बात के लिये जिसे वे मांगे एक मन हों" (मत्ती 18:19)। दूसरे शब्दों में, चर्चेस, पापों के प्रत्युत्तर में पद 15 से 17 तक में दिये गये वर्णन के अनुसार, चर्च अनुशासन को विस्तृत ढंग से काम में ला सकते हैं।

संक्षिप्त में, यीशु का तात्पर्य है कि स्थानीय चर्च न्यायिक कार्य करें। उन्होंने यहां व्यवस्थाविवरण से "दो या तीन साक्षियां" वाली भाषा का प्रयोग किया है, इस अध्याय में मूसा ने अपराधिक मामलों के न्याय किये जाने संबंधी नियमों की प्रक्रिया बताई है। जब ऐसे लोगों से सामना हो जो यीशु का प्रतिनिधित्व करने का दावा करते हैं लेकिन विरोधाभासी जीवन व्यतीत करते हैं, तो चर्चेस को बहुत सावधानीपूर्ण ढंग से उनके विरूद्व प्रमाणों को जांचना चाहिये और न्याय देना चाहिये। "क्या इस प्रकरण में सुसमाचार की मान्य स्वीकारोक्ति है? क्या यह व्यक्ति सुसमाचार का सच्चा प्रकाशक है? उसके विरूद्व प्रगट प्रमाण क्या सुझाव दे रहे हैं?''

अनुशासन पर प्रेरितों के विचार

प्रेरित पौलुस अनेक स्थानों पर चर्च अनुशासन की विनती करते हैं

> हे भाइयों, यदि कोई मनुष्य किसी अपराध में पकड़ा भी जाए, तो तुम जो आत्मिक हो, नम्रता के साथ ऐसे को संभालो, और अपनी भी चौकसी रखो, कि तुम भी परीक्षा में न पड़ो। (गला. 6:1)
>
> और अन्धकार के निष्फल कामों में सहभागी न हो, वरन उन पर उलाहना दो।
>
> (इफि. 5:11),
>
> किसी पाखंडी को एक दो बार समझा बुझाकर उस से अलग रह। (तीतुस 3:10),
>
> यदि कोई हमारी इस पत्री की बात को न माने, तो उस पर दृष्टि रखोय और उस की संगति न करो, जिस से वह लज्जित हो, तौभी उसे बैरी मत समझो पर भाई जानकर चिताओ। (2 थिस्सु. 3:14–15)।

यूहन्ना बचावस्वरूप अनुशासन के लिये प्रेरित करता है कि पहले स्थान पर ही किसी व्यक्ति को चर्च की सहभागिता में भाग लेने से रोक दिया जाये:

> जो कोई आगे बढ़ जाता है और मसीह की शिक्षा में बना नहीं रहता, उसके पास परमेश्वर नहीं । जो कोई उसकी शिक्षा में स्थिर रहता है, उसके पास पिता भी है, और पुत्र भी। यदि कोई तुम्हारे पास आए और यही शिक्षा न दे, उसे न तो घर में आने दो, और न नमस्कार करो। (2 यूहन्ना 9–10)

पतरस भी बचावस्वरूप अनुशासन का स्पष्ट उदाहरण प्रस्तुत करता है (प्रेरितों के कार्य 8:17–24)।

कुरिंथ में अनुशासन

चर्च अनुशासन के उपर एक अंतिम प्रसिद्व अंश 1 कुरूंथियों 5 में मिलता है। पौलुस 1 कुरूंथियों 5:1–3 के प्रथम कुछ पदों में पाप का उल्लेख करता है और इसके प्रति अपनी प्रतिक्रिया व्यक्त करता है।

> यहां तक सुनने में आता है, कि तुम में व्यभिचार होता है, वरन ऐसा व्यभिचार जो अन्यजातियों में भी नहीं होता, कि एक मनुष्य अपने पिता की पत्नी को रखता है। और तुम शोक तो नहीं करते, जिस से ऐसा काम करने वाला तुम्हारे बीच में से निकाला जाता, परन्तु घमण्ड करते हो।
>
> मैं तो शरीर के भाव से दूर था, परन्तु आत्मा के भाव से तुम्हारे साथ होकर, मानो उपस्थिति की दशा में ऐसे काम करने वाले के विषय में यह आज्ञा दे चुका हूं। (1 कुरूंथियों 5:1–3)

पौलुस की सलाह में जो उल्लेखनीय बात है कि कैसे यह सलाह परस्परव्याप्त भी है और मत्ती 18 में वर्णित यीशु की सलाह के साथ अतिच्छेद भी नहीं करती। यीशु के समान, पौलुस चर्च को न्यायिक भूमिका निभाने के लिये प्रेरित करता है। वह "न्याय" या "न्यायाधीश" शब्दों का उपयोग कई बार करता है (1 कुरूंथियों 5:3, 12–13) । यीशु के समान, पौलुस भी एक दृश्य का वर्णन करता है जहां यीशु का नाम लेने वाले को चर्च संगठन से निकाला जा सकता है। पौलुस, यीशु की मत्ती 18 में दी गयी सलाह से भिन्न विचार रखते हुए, चर्च द्वारा व्यक्ति को चेतावनी देने और प्रायश्चित के लिये आह्वान देने के लिये नहीं कहता। वह केवल चर्च को उस व्यक्ति को निकाल देने को कहता है – बिना कोई प्रश्न पूछे। हम इसके औचित्य के उपर अध्याय 3 में चर्चा करेंगे।

इसके बाद आने वाले पदों में, पौलुस सावधानीपूर्वक वर्णन करता है कि अनुशासन को किस रूप में दिखाई देना चाहियेः

> कि जब तुम और मेरी आत्मा हमारे प्रभु यीशु की सामर्थ के साथ एकत्रित हो तो ऐसा मनुष्य, हमारे प्रभु यीशु के नाम से शरीर के विनाश के लिये शैतान को सौंपा जाए, ताकि उस की आत्मा प्रभु यीशु के दिन में उद्धार पाए।
>
> (1 कुरूंथियों 5:4–5)

यीशु के शब्दों में किसी व्यक्ति को शैतान को सौंपना अर्थात उसके साथ मूर्तिपूजक या महसूल लेने वाले के समान व्यवहार करना कहलायेगा; उसके साथ इस प्रकार व्यवहार करना जैसे वह वाचायुक्त समाज का है ही नहीं। एक चर्च, आखिरकार, परमेश्वर के राज्य की सीमा

चौकी है। इसलिये, प्रत्येक जन जो परमेश्वर के राज्य का नहीं है, वह शैतान के राज्य का कहलायेगा। शैतान इस संसार का राजकुमार है, और संसार का राज्य अस्थाई रूप से उसका है। (यूहन्ना 12:31; 14:30; मत्ती 4:8–9) ।

अगली बात जिसे ध्यानपूर्वक पौलुस ने कहा है कि ऐसे व्यक्ति को चर्च से निकालने में असफल रहना संपूर्ण चर्च को खतरे में डालना है

> तुम्हारा घमण्ड करना अच्छा नहीं क्या तुम नहीं जानते, कि थोड़ा सा खमीर पूरे गूंधे हुए आटे को खमीर कर देता है। पुराना खमीर निकाल कर, अपने आप को शुद्ध करो कि नया गूंधा हुआ आटा बन जाओ ताकि तुम अखमीरी हो, क्योंकि हमारा भी फसह जो मसीह है, बलिदान हुआ है। सो आओ हम उत्सव में आनन्द मनावें, न तो पुराने खमीर से और न बुराई और दुष्टता के खमीर से, परन्तु सीधाई और सच्चाई की अखमीरी रोटी से।
>
> मैं ने अपनी पत्री में तुम्हें लिखा है, कि व्यभिचारियों की संगति न करना। यह नहीं, कि तुम बिलकुल इस जगत के व्यभिचारियों, या लोभियों, या अन्धेर करने वालों, या मूर्तिपूजकों की संगति न करो, क्योंकि इस दशा में तो तुम्हें जगत में से निकल जाना ही पड़ता। मेरा कहना यह है कि यदि कोई भाई कहला कर, व्यभिचारी, या लोभी, या मूर्तिपूजक, या गाली देने वाला, या पियक्कड़, या अन्धेर करने वाला हो, तो उस की संगति मत करनाय वरन ऐसे मनुष्य के साथ खाना भी न खाना। (1 कुरूंथियों 5:6–11)।

अध्याय के अंतिम पदों में, पौलूस इस तथ्य को दोहराता है कि मनुष्य के जीवन में चर्च एक न्यायिक भूमिका निभाता हैः "क्योंकि मुझे बाहर वालों का न्याय करने से क्या काम? क्या तुम भीतर वालों का न्याय नहीं करते? परंतु बाहर वालों का न्याय परमेश्वर करता है 'इसलिये उस कुकर्मी को अपने बीच में से निकाल दो'" (पद 12–13)

चर्च अनुशासन का उद्देश्य

प्रथम कुरूंथियों 5 विशेषकर चर्च अनुशासन के उद्देश्य से उपयोगी है। हम कम से कम पांचवें अध्याय का परीक्षण कर सकते हैं। प्रथम स्थान पर, अनुशासन पाप को *उजागर* करता है। पाप, कैंसर के समान, छिपे रहना पसंद करता है। अनुशासन कैंसर को उजागर करता है ताकि उसे शीघ्रता से काट कर अलग किया जा सके (देखें 1 कुरूंथियों 5:2)।

दूसरा, अनुशासन *चेतावनी* देता है। चर्च अनुशासित करके परमेश्वर द्वारा दिये जाने वाले दंड की भूमिका नहीं निभाता। पर इसके बदले, वह एक छोटा सा दर्शनपूर्ण नाटक करता है जो आने वाले उस महान न्याय की तस्वीर उपस्थित करता है (पद 5) । अनुशासन एक तरसपूर्ण चेतावनी है।

तीसरा, इसका उद्देश्य बचाना है। चर्चेस जब एक सदस्य को मृत्यु की तरफ बढ़ते देखते हैं और उनकी कोई भी विनती और समझाईश उस व्यक्ति को लौटा लाने में सफल नहीं होती है, तब उस समय अनुशासन का सहारा लेते हैं। अंतिम उपाय यही बचता है जो एक व्यक्ति को पश्चाताप की राह पर ला सकता है (पद 5)।

चौथा, अनुशासन *सुरक्षा* प्रदान करता है। जैसे कैंसर एक कोशिका से दूसरी कोशिका तक फैलता है, उसी प्रकार पाप एक व्यक्ति से दूसरे व्यक्ति तक तुरन्त ही फैलता है (पद 6)।

पांचवा, इसका उद्देश्य *यीशु के लिये एक भली गवाही प्रस्तुत* करना होता है। कहने में अजीब लगता है, लेकिन चर्च अनुशासन गैर मसीहियों के लिये अच्छा है क्योंकि यह परमेश्वर के लोगों की जो आकर्षित करने वाली विशिष्टता है, उसे संरक्षित करने में सहायक होता है (देखें पद 1)। स्मरण रखिये, चर्चेस को नमक और प्रकाश के सदृश होना चाहिये। ''परंतु यदि नमक का स्वाद बिगड़ जाए.....।'' यीशु ने कहा, ''फिर वह किसी काम का नहीं, केवल इस के कि बाहर फेंका जाए और मनुष्यों के पैरों तले रौंदा जाए (मत्ती 5:13)।''

सुसमाचारिय संरचना की आवश्यकता

केवल यह अंतिम उद्देश्य है जो संकेत देता है कि एक विशाल धर्मशास्त्रिय संरचना की आवश्यकता है ताकि यह जान सकें कि कैसे चर्च अनुशासन तक पहुंचा जायें।

चर्च अनुशासन विषय से उपजी दुविधा की ओर देखिये। हमने कहा था, कि चर्च अनुशासन, *पाप सुधार* पर अपना विचार केंद्रित करता है। परंतु मसीही सुसमाचार, अधिकतर लोग इससे सहमत होंगे, कि *पाप को क्षमा* किये जाने के उपर विचार केंद्रित करता है। अगर परमेश्वर पाप क्षमा करते हैं तो हम पाप सुधारे जाने की चिंता क्यों करें? मसीहियो को भी दुसरों का पाप क्षमा करनी चाहिए। तो फिर एक दूसरे के पाप सुधारे जाने का उद्देश्य क्या होगा?

एक सीमित सुसमाचार जो केवल क्षमा और परमेश्वर के बेपरिमाण प्रेम की बात करता है उसके पास इस सतही स्तर की परेशानी से निपटने के लिये संसाधन नहीं है। परिणाम स्वरूप, जब पाप को उजागर नहीं किया जाता है तो चर्चेस भी संसारी ढंग के कहलाये जाने लगते हैं।

किंतु, एक ठोस सुसमाचार न केवल पाप बोध की समस्या से निपटता है, परंतु, साथ ही पाप द्वारा पतित होने की समस्या को भी संबोधित करता है व एक नये स्वभाव को प्रदान करने की प्रतिज्ञा करता है। परमेश्वर मनुष्य के द्वारा इस उद्देश्य की पूर्ति चाहता है कि मनुष्य उसका प्रतिनिधित्व करें, अतः बाइबल की इस विशाल कहानी के अंतर्गत इस सुसमाचार को भी रखा गया है।

परमेश्वर ने आदम को कार्य सौंपा था कि सृष्टि के उपर राज्य करें, परंतु आदम असफल रहा। ऐसे ही इजरायल भी असफल रहा। ऐसे ही इजरायल का राजा, दाउद असफल रहा। परंतु उसके उपरांत परमेश्वर की प्रतिछाया में एक जन प्रगट हुआ – जो सिद्व था। शुभ सुसमाचार यह था कि परमेश्वर ने हमारे लिये एक मार्ग तैयार किया कि हम परमेश्वर से मेलमिलाप कर ले और हमारे जीवन के लिये उनके मूल उद्देश्य को पूर्ण करें कि हम यीशु के साथ मिलकर संपूर्ण सृष्टि पर राज्य करें। वह अपने पुत्र के कार्य द्वारा हमें पाप के दोष से मुक्ति दिलाने की और साथ ही अपनी आत्मा के कार्य किये जाने के द्वारा हमारे भीतर परमेश्वर की आज्ञा मानने वाला नया स्वभाव उत्पन्न करने की प्रतिज्ञा करता है। तो अब हम ऐसा मानते हैं कि इस संरचना के अंतर्गत चर्च अनुशासन का अर्थ स्पष्ट होता है।

अध्याय – 2

अनुशासन को समझने के लिये एक सुसमाचारिय संरचना

मान लीजिये एक अमेरिकन फुटबाल खिलाड़ी कुछ मित्रों के साथ सॉकर खेलने के लिये शामिल हुआ। तब, खेल के बीच में, उसने सॉकर की गेंद उठाई और उसे लेकर दौड़ना आरंभ कर दिया। यहां, रैफरी उस गलती के लिये निश्चित ही सीटी बजायेगा और नियमोल्लंघन का आरोप लगायेगा ।

इस बिंदु पर पहुंचकर, अमेरिकन फुटबॉल खिलाड़ी पीछे पलट कर रैफरी को आश्चर्य से देख सकता है। सीटी क्यों बजायीं? नियमोल्लंघन का आरोप क्यों? उसने तो एक साधारण सा काम किया जो वह हमेशा करता है कि वह गेंद उठाता है और भागता है।

प्रत्युत्तर में, इस अमेरिकन फुटबाल खिलाड़ी को यह समझाया जा सकता है कि सिर्फ गोलकीपर को छोड़कर अन्य सॉकर खिलाड़ी अपने हाथों से गेंद को स्पर्श नहीं कर सकते। अब पुनः, खेल आगे बढ़ाया जाये और यह गलती दुबारा न करें।

या कोई, थोड़ा और समय लेकर यह बता सकता है कि सॉकर कैसे खेला जाता है। सॉकर की यह परिभाषा दी जा सकती है कि यह पैरों से खेले जाने वाला खेल है, न कि हाथों से। सॉकर को देखने में इस बात का आकर्षण बना रहता है कि कैसे कुशल खिलाड़ी बिना हाथों के प्रयोग से गेंद पर नियंत्रण बनाये रहते हैं। इसी कारण से संसार का हर देश सिवाय अमेरिका के इस खेल को ''फुटबॉल'' के नाम से पुकारता है। अमेरिकन फुटबाल

खिलाड़ी ने सिर्फ नियम नहीं तोड़ा; उसने वह नियम तोड़ा जो खेल के उद्देश को परिभाषित करता है।

चर्च अनुशासन भी इसी तरह दो प्रकार से समझाया जा सकता है। कोई इसे पाप सुधारने वाला कार्य कह सकता है, जैसे मसीही जीवन में कोई गलती करने पर सीटी बजाना। या, इससे और अच्छी बात, सुसमाचार की विशाल संरचना में जिसमें चर्च और मसीही जीवन का उद्देश्य सम्मिलित है, सीटी बजाने के कार्य को कोई भली भांति समझ सके। अनुशासन को धर्मशास्त्र की ऐसी विशाल संरचना में रखकर, जिसे मैं सुसमाचारिय संरचना कहता हूं, विवेक को अभ्यास मे लाने के द्वारा, चर्च में उपजने वाली पाप की किसी भी परिस्थिति को स्वतः हल किया जा सकता है।

उदाहरण के लिये, झूठ बोलने जैसी "गलती" को लेते हैं। तो क्या इसका यह अर्थ निकाला जा सकता है कि जब एक सदस्य झूठ बोलता है तो इसमें पूरे चर्च को शामिल समझा जायें? बेशक नहीं। उस झूठ को घेरे रखने वाली परिस्थितियों पर बहुत कुछ निर्भर करता हैः यह कितना महत्वपूर्ण है? क्या वह व्यक्ति इसमें सतत लगा हुआ है? या यह एक नमूना है?

गुप्त में बोले जाने वाला झुठ और सार्वजनिक रूप से बोले जाने वाला झुठ इनके मध्य कहीं एक अंतर होता है। हम कैसे यह जान सकते हैं कब वह रेखा पार कर ली गई? चर्च अनुशासन के सामने यह व्यवहारिक चुनौती है। निश्चित रूप से यहां बहुत अधिक बुद्विमानी की आवश्यकता है।

मेरा तक्र है कि चर्च के अगुवे सुसमाचार की इस विशाल संरचना में सुधारवादी गतिविधि के द्वारा, यह समझ पाने के योग्य होंगे कि कहां वह रेखा पार कर ली गयी। सुसमाचार हमारी सहायता करता है कि कब बोले और कब खामोश रहें, कब कोई कदम उठाना है और कब नहीं उठाना है।

सुसमाचार क्या है?

चर्च अनुशासन के लिये रूपरेखा स्थापित करते समय हमें समझना होगा (1) सुसमाचार, (2) मसीही कौन होता है, (3) स्थानीय चर्च क्या होता है, (4) चर्च सदस्यता का क्या अर्थ होता है।

सुसमाचार क्या है? मैंने भूमिका में एक चित्रण खींचा था। मुझे इसे यहां थोड़ा सा भरने दीजिये। सुसमाचार वह शुभ संदेश है जो मनुष्य जाति के परमेश्वर के विरूद्व हो जाने और संसार मे स्वयं को प्रतिष्ठित करने की लंबी कहानी के अंत में प्रगट होता है।

परमेश्वर ने मनुष्य को अपने प्रतिरूप में बनाया ताकि इस सृष्टि के उपर उसके राज्य और चरित्र का प्रतिनिधित्व कर सके। उसने उन्हें अपने प्रतिरूप में निर्मित किया ताकि वे परमेश्वर के स्वरूप को प्रस्तुत कर सके। उसने उन्हें आज्ञाकारी ढंग से राज्य करने के लिये बुलाया, ताकि वे उस तरह राज्य करें जैसे वह राज्य कर रहा हो: भलाई, न्याय, पवित्रता और प्रेम के साथ।

परंतु मानवता ने यह तय किया कि वह परमेश्वर से बढ़कर बुद्विमान है और लोगों ने स्वयं ही राज्य करने का चुनाव किया। उन्होंने अपने स्वभाव को ही भ्रष्ट बना डाला

और अपने लिये मृत्यु का दंड सुरक्षित कर लिया। इजरायल की कहानी इस सृष्टि के पतन की स्पष्ट कहानी है। एक समूह विशेष को परमेश्वर के नियमों के समस्त लाभ प्रदान किये गये और उनके साथ परमेश्वर की उपस्थिति बनी रहती थी ताकि वे उसका प्रतिनिधित्व करें, पर उन लोगों ने अपनी मनमानी की। इसलिये परमेश्वर ने उन्हें देश से निर्वासित कर दिया।

शुभ संदेश, जो इस दुखद कहानी के अंत में प्रगट होता है कि आदम और इजरायल के पुत्रों में से एक व्यक्ति वह कार्य करने के लिये प्रगट होता है जो न तो आदम कर सका न इजरायलः वह कार्य था, आज्ञाकारी ढंग से राज्य करना और परमेश्वर के लिये लोगों को जीतना। वह जो बिल्कुल परमेश्वर का प्रतिबिंब था, मनुष्य के रूप में आया और स्वर्गिक पिता के प्रति अत्यधिक आज्ञाकारी बने रहकर एक राज्य की स्थापना की। न केवल उसने राज्य स्थापित किया; परंतु लोगों के पाप का दंड चुकाने के बदले अपना जीवन बलिदान करके, इस राज्य के लिये लोगों को जीता और तब मृतकों में से जीवित होकर एक संपूर्ण नयी सृष्टि का शुभारंभ किया।

संक्षिप्त में, शुभ संदेश यह है कि यीशु मसीह ने उद्धार को जीता और जो उन पर विश्वास रखते और उनको प्रभु जानकर अनुसरण करते हैं, उनके लिये वह राज्य करता है। उद्धार में पापों की क्षमा, मसीह के द्वारा परमेश्वर से मेलमिलाप, मसीह के लोगों के साथ मेलमिलाप और एक नया पवित्र आत्मा से भरा हृदय, जो इस पृथ्वी पर यीशु को प्रगट करने के उद्देश्य से आज्ञाकारी रूप में राज्य करना चाहता है, सम्मिलित है।

मसीही कौन है?

मसीही कौन है? मसीही कौन है, इस बात को वर्णित करने के कई तरीके हैं। जो विश्वास में अभी आये हैं, वे इसे इस रूप में समझ सकते हैं कि जिसे क्षमा किया गया हो और जो मसीह के रक्त की नयी वाचा द्वारा परमेश्वर से संयुक्त हो गया हो। वह जन जिसे आत्मा द्वारा नया स्वभाव प्रदान किया गया हो (व्यवस्था 30:6–8; यिर्मयाह 31; यिजकेल 36:24–27)।

पर मसीही जन के लिये नये पद और नये स्वभाव के अतिरिक्त और भी कुछ है। एक मसीही जन के पास एक नया परिवार होता है। वह अब लोगों के साथ एक सदस्य के रूप में गिना जाता है। मसीह के साथ मेलमिलाप हो जाने का अर्थ उसके लोगों से मेलमिलाप होना है (इफि 3:6)। पौलुस इस संबंध को इफिसियों 2 के प्रथम और द्वितीय भाग के द्वारा प्रदर्शित करता है। पहला, वह हमें बताता है कि हम अनुग्रह से बचाये गये हैं (इफि 1:1–10)। दूसरा, वह प्रगट करता है कि यहूदी और अन्यजाति को विभाजित करने वाली दीवार गिर चुकी है, जो एक नये मनुष्य का निर्माण करती है (पद 11–22)। जब आप माता पिता द्वारा गोद लिये जाते हैं आप को नये भाई बहिन मिलते हैं। वैसा ही मसीहत के साथ भी होता है। भले ही हम यह बात जानते हो या नहीं कि हम एक नये परिवार में सम्मिलित हो रहे हैं, लेकिन मसीह के द्वारा हमें गोद लिये जाने पर परिवार भी हमें गोद ले लेता है।

एक मसीही जन के पास एक नया पद, नया स्वभाव एक नया परिवार और अंततः एक नया कार्य होता है। एक मसीही अब वह है, जो यीशु को और इसी कारण से परमेश्वर का भी प्रतिनिधित्व करता है। बपतिस्में और प्रभु भोज का भी ठीक यही संदेश है। बपतिस्मा लेने के द्वारा हम स्वयं को पिता, पुत्र और पवित्र आत्मा के नाम में पहचान प्रदान करते हैं

और मसीह की मृत्यु और पुनरूत्थान में सम्मिलित माने जाते हैं (मत्ती 28:19; रोमियों 6:4–5)। प्रभु भोज को ग्रहण करना अर्थात उसकी मृत्यु की घोषणा करना और उसकी देह में हमारी सदस्यता को प्रगट करना कहलाता है (1 कुरिथ 11:26–29; मत्ती 26:26–29)। परमेश्वर चाहता है कि उसके लोग जाने जायें और अलग दिखाई दें। वह उसके लोग और संसार के मध्य एक सीमारेखा खींचना चाहता है। वह चाहता है कि हम पवित्र बनें क्योंकि वह पवित्र है। मसीही जन आज उसका प्रतिनिधित्व करते है!

दूसरे शब्दों में, एक मसीही जन वह है जो इस पृथ्वी पर परमेश्वर का नाम धारण करता है, उसके सुसमाचार को प्रकट करता है, उसके लोगों के साथ संयुक्त होता है। सारांश यह है, मसीही जन वह राजदूत है जिसकी पहचान और कार्य संयुक्त हो जाते हैं। प्रत्येक बात जो वह राजदूत कहता और करता है, उसके राजा का प्रतिनिधित्व करती है। मसीहियों और मसीह का यही कार्य है।

एक स्थानीय चर्च क्या है?

स्थानीय चर्च की क्या स्थिति है? यह क्या है? स्थानीय चर्च सिर्फ मसीहियों के एकत्रित होने का स्थान नहीं है पर उससे भी बढ़कर है। किसी पाक्र में बैठे दस मसीही जन एक चर्च नहीं बना सकते। यीशु ने स्थानीय चर्च के रूप में एकत्रित हुये मसीहियों को अपने राज्य का प्रभुत्व दिया है, जो उसने किसी वैयक्तिक मसीही जन को नहीं दिया है। विशेषकर, उसने स्थानीय चर्चेस को बपतिस्मा और प्रभु भोज देने के द्वारा परमेश्वर के राज्य के अधिकार को कार्य में लाने की जिम्मेदारी सौंपी है, ताकि परमेश्वर के लोगों को संसार से अलग चिंन्हाकित कर सकें।

यह तस्वीर हमें मत्ती 16 और 18 के अध्याय में देखने को मिलती है; यही तस्वीर प्रेरितों की पुस्तक और पत्रियों में जाकर गतिमान हो जाती है। यीशु ने स्थानीय चर्चेस को अपने राज्य की चाबियां सौंपी हैं ताकि वह पाप स्वीकार करने वाले के सामने खड़ा हो सके, पापी के जीवन में जो कुछ हुआ, उसके उपर मंथन करे और स्वर्ग की ओर से उसके लिये आधिकारिक न्याय इन बिंदुओं पर ठहराये। क्या इस व्यक्ति की पाप स्वीकारोक्ति उचित है? क्या यह जन सच्चे रूप में पाप स्वीकार रहा है? स्थानीय चर्च यीशु के उदाहरण का अनुसरण करता है जैसे यीशु पतरस से प्रश्न पूछते हैं, पतरस जिसने यह घोषित किया था कि यीशु ही मसीहा है (मत्ती 16:16–17) विशेष तौर पर, चर्च अपना कार्य प्रभु भोज और बपतिस्मा के संस्कारों के माध्यम से जो मत्ती 26 और मत्ती 28 में दिये गये है, पूर्ण करता है।[1]

दूसरे शब्दों में, स्थानीय चर्च के पास यह घोषित करने का स्वर्गीय अधिकार है कि कौन राज्य का नागरिक है और इसलिये वे लोग यीशु के नाम का प्रतिनिधित्व करेंगे। यीशु ने वैयक्तिक रूप से किसी को नहीं ठहराया है कि वे एकाएक तय कर ले कि वे मसीह के हैं, और इसके बाद वे राष्ट्रों के सामने घोषित करें कि वे यीशु का प्रतिनिधित्व करते हैं। यरूशलेम के लोग पतरस से पूछते हैं कि उन्हें उद्वार पाने के लिये क्या करना होगा। उसका जवाब था, "मन फिराओ और बपतिस्मा लो" (प्रेरितों 2:38)। उन्हें यरूशलेम चर्च की ओर से आधिकारिक समर्थन की आवश्यकता थी ।

हमें याद रखना चाहिये कि स्थानीय चर्च की सत्ता सत्यापित कर सकती है। चर्च ऐसे ही किसी को राज्य का नागरिक नहीं बना देता है। यह चर्च का उत्तरदायित्व है कि वह

यह घोषित करे कि कौन मसीह के राज्य का है और कौन नहीं। तो चर्च एक प्रकार से किसी राष्ट्र के दूतावास के समान है। अगर विदेश में घूमते समय आप के पासपोर्ट की समयावधि समाप्त हो जाती है तो आप दूतावास में पासपोर्ट के नवीनीकरण के लिये आवेदन दे सकते हैं। आप को एक वैयक्तिक नागरिक के रूप में अधिकार नहीं है लेकिन दूतावास को है।

निसंदेह, चर्च, परमेश्वर के राज्य का अधिकार रखने वाली संस्था से बढ़कर है। यह एक ''देह'' है, एक ''परिवार'' है, ''भेड़ों का झुंड'' है एक ''मंदिर'' है ''सच्चाई का स्तंभ और आश्रय'' है, एवं उससे भी बढ़कर है। परंतु हमें इस तथ्य की भी अनदेखी नहीं करनी चाहिये कि चर्च यीशु द्वारा पृथ्वी पर स्थापित वह संस्था है जो यह घोषणा करने के लिये कि कौन उसके नागरिक या राजदूत हैं, अधिकृत है ।

संस्थागत रूप में चर्च को परिभाषित करते हुये, हम यह कह सकते हैं कि यह मसीहियों का एक समूह है जो नियमित रूप से मसीह के नाम में एकत्रित होता है, ताकि सुसमाचार प्रचार और सुसमाचारीय संस्कारों के माध्यम से यीशु मसीह व उसके राज्य में एक दूसरे की सदस्यता की आधिकारिक रूप से पुष्टि करे और देखभाल करे। मसीही जन, चर्च में किसी क्लब के समान सम्मिलित नहीं होते हैं, बल्कि वे उसके प्रति स्वयं को समर्पित करते हैं। चर्च पूर्णतः कोई सत्ता नहीं है, जैसे माता पिता किसी बच्चे के लिये पूर्ण जिम्मेदार शक्ति कहलाते है। परंतु मसीह चाहते हैं कि मसीहियों को परमेश्वर के राज्य में अपनी नागरिकता के लिये, किसी स्थानीय चर्च की देखभाल में स्वयं को सौंपना चाहिये।

तो क्या स्थानीय चर्च इस भूमिका को अच्छी तरह निभायेंगे? नहीं। वे गलतियां करेंगे, जैसे हर दूसरी संस्था, जो यीशु द्वारा स्थापित है, गलतियां करती है। स्थानीय चर्च, मसीह के आने के पहले के अंत समय का अपूर्ण प्रस्तुतिकरण है। इस सत्य के बावजूद कि वह गलतियां भी कर सकता है, कोई यह नहीं कह सकता कि इसके पास यीशु के नाम को प्रगट करने का अधिकार नहीं है। तो, यह स्पष्ट होना चाहिये कि चर्च की प्राथमिक भूमिका यीशु के नाम को बचाना है।

चर्च की सदस्यता क्या है?

तब, चर्च की सदस्यता क्या होती है? यह मसीह के राज्य में नागरिकता मिलने की घोषणा है। यह पासपोर्ट है। यह मसीह के प्रेस रूम से जारी की गयी उदघोषणा है। यह ऐसी घोषणा है कि जो विश्वासी है वह आधिकारिक रूप में, अधिकारपत्र, कार्ड धारक और यीशु के प्रतिनिधि हैं।

ठोस रूप में कहें, तो चर्च सदस्यता स्थानीय चर्च और मसीह के बीच में एक औपचारिक संबंध होता है। इस संबंध का निर्वाह मसीही जन चर्च की निगरानी में मसीह के शिष्य होने और अपने समर्पण के द्वारा करता है। ध्यान दीजिये कि इसमें अनेक तत्व उपस्थित हैं:

- एक चर्च संगठन औपचारिक रूप से किसी व्यक्ति द्वारा विश्वास के अंगीकार और बपतिस्मा की *पुष्टि* करता है;
- यह उस व्यक्ति की शिष्यता की देखभाल करने का जिम्मा लेता है;

- व्यक्ति अपनी शिष्यता को इस चर्च संगठन और उसके अगुओं के प्रति समर्पित करता है।

चर्च संगठन व्यक्ति से कहता है, ''हम आपके विश्वास, बपतिस्मा और मसीह में शिष्यता को वैधानिक तौर पर मान्य करते हैं। इसलिये, हम सार्वजनिक तौर पर आप को देशों के सामने पहचानते और आप की *पुष्टि* करते हैं कि आप मसीह के हैं और हम हमारी *देखभाल* द्वारा आप को सहभागिता प्रदान करते हैं।'' मुख्य रूप से, व्यक्ति चर्च संगठन से यह कहता है, ''अब से मैं भी आप को एक विश्वसनीय, सुसमाचार प्रचार करने वाले चर्च के रूप में पहचानता हूं, ''मैं मेरी उपस्थिति और मेरी शिष्यता आप के प्रेम और निगरानी के लिये समर्पित करता हूं।''

चर्च सदस्यता के मापदंड मसीह होने के मापदंडों से न कम होना चाहिये, न उंचे होने चाहिये, केवल एक अपवाद को छोड़कर। मसीही जन वही है जिसने प्रायश्चित किया हो और विश्वास करता हो, चर्च को भी ऐसों लोगों की सदस्यता की पुष्टि करना चाहिये। बपतिस्मा एक अतिरिक्त जरूरत है। चर्च के सदस्यों का बपतिस्मा पाया हुआ होना आवश्यक है। यह नये नियम में दिये गये नमूने के समान है। यरूशलेम में पतरस ने भीड़ से कहा था, ''पश्चाताप करो और बपतिस्मा लो'' (प्रेरितों के काम 2:38)। पौलुस, रोम के चर्च को, लिखते हुये साधारण तौर पर यह मान लेता है, कि रोम के चर्च का हरेक जन बपतिस्मा पाया हुआ है (रोमियों 6: 1–3)।

चर्च सदस्यता, दूसरे शब्दों में कहें, तो कोई ''अतिरिक्त आवश्यकता'' नहीं है। चर्च एक मसीही जन की विशेष जिम्मेदारी लेता है और मसीही जन बदले में चर्च के प्रति

जिम्मेदार है। यह मसीहत को ''धारण करना'' ''प्रगट करना'' ''उसमें जीना'' और ''कुछ ठोस कार्य करने'' से हमारी सदस्यता, मसीह की विश्वव्यापि देह में प्रगट करती है। किसी रूप में, स्थानीय चर्च और इसके सदस्यों का संयोजन एक प्रकार से विवाह में बोले जाने वाली शपथ ''हां, मैं करूंगा'' के समान है। इसलिये कुछ लोग चर्च की सदस्यता को ''वाचा'' का नाम देते हैं।

यह सच है कि एक मसीही को चर्च में सम्मिलित होना चाहिये, किंतु इससे यह कोई स्वायत्त संस्था नहीं हो जाती। असल में, मसीह को चुनने के बाद मसीही जन के पास कोई विकल्प नहीं रह जाता कि वह चर्च में आना न चाहे।

चर्च अनुशासन की संपूर्ण संकल्पना

सुसमाचार के उपर, मसीही जन के उपर, चर्च और चर्च सदस्यता के उपर जो प्राथमिक चर्चा होती है, वह ऐसा ढांचा प्रदान करती है जिसके द्वारा चर्च अनुशासन को समझा जा सकता है। मुझे इस चर्चा से चार बातें लेने दीजिये जो चर्च अनुशासन के लिये महत्वपूर्ण आधारभूत पुर्वधारणाए प्रस्तुत करती हैः

1. *बदलाव की आशा।* नयी वाचा की वह प्रतिज्ञा है कि मसीह के लोग, अपना परिवर्तित जीवन, पवित्र आत्मा की सहायता से जीयेंगे। भले ही उनमें बदलाव धीरे धीरे दिखाई दें, पर चर्च आशा करता है कि उनके जीवन से परमेश्वर के अनुग्रह और आत्मा के फल दिखाई देंगे। फल दिखाई न देने के प्रति चर्च अनुशासन एक सही प्रतिक्रिया है। बुरे फल लाने की अवस्था में भी चर्च अनुशासन कार्य करता है।

2. *प्रतिनिधित्व का कार्य।* मसीहियों को छोटे मसीहा का रूप बनना है, जो इस जगत में यीशु को प्रगट कर रहे हैं। प्रतिनिधित्व की संकल्पना यह प्रगट करती है कि यीशु मसीहा हैं और प्रभु हैं; यह इस तथ्य पर निर्भर करता है कि मसीहियों को एक नया पद और एक नया कार्य दिया गया है। अनुशासन को उस मसीही जन के प्रति अमल में लाना एक सही प्रतिक्रिया है, जो यीशु का प्रतिनिधित्व करने में असफल रहता है और ऐसा करने की जिसकी इच्छा भी नहीं होती है।

3. *स्थानीय चर्च का अधिकार।* यीशु ने स्थानीय चर्च को यह अधिकार दिया है कि वह आधिकारिक रूप से उसके राज्य के नागरिकों की देखभाल करे। चर्च मसीही जन को तैयार नहीं करते। पवित्र आत्मा करता है। पर चर्चेस के पास यह घोषित करने वाला अधिकार है और देशों के सामने, सार्वजनिक कथन देने की जिम्मेदारी है कि कौन चर्च का सदस्य है और कौन नहीं। चर्च जब निर्वासित करता है तो उसमें किसी को बलपूर्वक सार्वजनिक सभाओं से निकाला जाना शामिल नहीं है, परमेश्वर के राज्य ने तलवार के बल पर लोगों को निकालने के आदेश नहीं दिये हैं बल्कि, चर्च की सार्वजनिक टिप्पणी के द्वारा अब उस व्यक्ति की स्वर्ग में नागरिकता को प्रमाणित नहीं किया जा सकता। चर्च से बहिष्कृत करने का अर्थ यह घोषना करना है कि अब चर्च उत्तरदायित्व नहीं लेता है कि यह मनुष्य मसीही रहा या नहीं।

4. *सदस्यता अर्थात समर्पण।* मसीहियों को मसीह के प्रति आज्ञाकारी रहने के लिये बुलाया जाता है। ताकि वे चर्च के प्रति संबंद्व होने और स्थानीय चर्चेस की देखरेख के प्रति समर्पित रहे। जब अनुशासन की संभावित प्रक्रिया के द्वारा उन्हें चेतावनी दी जाती है, तो वे चर्च की

सदस्यता से इस्तीफा देने के द्वारा चर्च की कार्यवाही को रोक नहीं सकते। यह ठीक वैसे ही कहलायेगा कि जैसे कोर्ट द्वारा अपराधिक गतिविधि का मुकदमा चलाये जाने से पहले कोई उस देश की नागरिकता से त्यागपत्र दे दे।

जब हम चर्च अनुशासन को इस धर्मवैज्ञानिक दृष्टि से देखते हैं, तो पूर्ण रूप से हमें बातें समझ आ जाती हैं। इसका तात्पर्य, पाप को सुधारना या चेतावनी देना ही नहीं है। अनुशासन तो पाप को इस उददेश्य से सुधारने के लिये अमल में लाया जाता है कि यह तय कर सकें कि चर्च सदस्य वास्तव में यीशु का सही ढंग से प्रतिनिधित्व कर रहे हैं या नहीं। जैसा होने का वे दावा करते हैं, चर्च अनुशासन उनको उसी रूप में बने रहने के लिये बुलाहट देता है।

तो, अनुशासन इस प्रश्न के आसपास घूमता है कि कौन इस जगत में स्वर्ग का प्रतिनिधित्व करने के लिये लाइसेंस धारी या अधिकृत है। स्वयं को मसीही कहने, अर्थात मसीही होने से जुड़े अधिकार को प्रगट करने के लिये अधिकृत है। स्थानीय चर्च, मसीह द्वारा सौंपे गये अधिकार को रखने वाली संस्था है। जो मसीह जन के विश्वास के उपर बपतिस्मा और प्रभु भोज देकर मुहर लगाता है। चर्च अनुशासन तब भूमिका में आता है जब सदस्य की विश्वसनीयता पर प्रश्न चिंन्ह लगता है। यह प्रश्न उठाया जाता हैः कि क्या चर्च फिर भी यह विश्वास करता है कि एक गलती करने वाला सदस्य मसीही जन कहलायेगा? क्या चर्च सार्वजनिक तौर पर सदस्य के लिये ऐसा कथन निरंतर देता रहे?

संक्षिप्त में, चर्च अनुशासन इस पृथ्वी पर यीशु की प्रतिष्ठा को प्रगट करता है। सचमुच इसकी कीमत बहुत उंची है।

अध्याय 3

अनुशासन कब आवश्यक है?

मसीही शिष्य वह है जो यीशु मसीही का अनुसरण करता है। स्थानीय चर्च में शिष्यता के द्वारा, चर्च सदस्य एक दूसरे को यीशु का अनुसरण करने में सहायक रहते हैं। सदस्य किसी का निर्माण करने और सुधारने के द्वारा शिष्यता को सुरक्षित रखते हैं। वे आपस में भली बातें और बुरी बातें सिखाते हैं। वे एक दूसरे को सही मार्ग की तरफ जाने के लिये प्रेरित करते हैं और किसी को गलत मार्ग पर जाने से रोकते हैं।

इन पंक्तियों को लिखने का तात्पर्य यह है कि मसीही जन को सुधारा जाना प्रमुख है। मसीही जन होने का प्रमुख भाग यह है कि हम इस बात को भी समझ लें कि हम सीमित और पतित लोग हैं। हम असावधान भी हो सकते हैं और स्वयं को धोखा देने वाले भी हो सकते हैं। इसलिये दूसरे विश्वासियों की हमें आवश्यकता है कि जब कभी हम मसीही शिष्यता के पथ से भटक जायें, वे हमें इसका बोध करवायेंगे।

मुझे स्मरण है कि चर्च के प्राचीन जैमी से मेरे इन्कम टैक्स को लेकर बात हो रही थी। बातों के दौरान जैमी ने, मुझे और मेरी पत्नी को किराये से मिलने वाली आय के उपर टैक्स चुकाने के लिये कहा। जिस क्षण जैमी ने "किराये की आय" पर टैक्स चुकाने के लिये कहा, मेरे दिमाग में यह विचार कौंधा, "अरे ठहरो, किराये की आय की बात कर रहे हो? हां, मुझे जो हर माह किराये के चैक्स मिलते है। क्या मुझे उन पर टैक्स चुकाने की जरूरत नहीं है,?" बिल्कुल, मैं संयुक्त राष्ट्र सरकार को देने वाले टैक्स की चोरी कर रहा

था। मैं इस बात को जानता नहीं था। मैं शिष्यता के पथ से भटक गया था और यीशु का प्रतिनिधित्व करने में असफल रहा। यीशु ने कहा था हमें अपने कर कैसर को चुकाना चाहिये। इसलिये, मसीही होने के रूप में मेरी जिम्मेदारी थी कि मैं पिछले टैक्स रिकार्ड को खोलता और अतिरिक्त पैसा चुकाता।

जो मसीही यह मानते हैं कि हम सीमित और पतित हैं, हम यह भी मानते हैं कि हमारे जीवन के अनेक क्षेत्रों में हम यीशु की राह से भटके हुये हैं। इसका हल यह है कि हम हमारा जीवन चर्च के अन्य सदस्यों के सामने खोलना आरंभ कर दे। तब वे हमें यह देखने में हमारी सहायता करेंगे जो हम स्वयं तत्काल नहीं देख पा रहे हैं।

अनुशासन इसी के बारे में हैः एक दूसरे के पाप को सुधारते हुये मसीह की समानता में बढ़ना। मैं नहीं जानता था कि जैमी मुझे "अनुशासित" कर रहा था परंतु मैं उसका आभारी हूं अगर वह ऐसा कर रहा था।

हम कब कहेंगे कि चर्च अनुशासन आवश्यक है। विस्तृत रूप में कहें तो चर्च अनुशासन तब आवश्यक है जब यीशु का शिष्य पाप करते हुये राह से भटक जाये। यह तब–तब आवश्यक होता है जब–जब एक मसीही के कार्य और जीवन के बीच में अंतर दिखाई दे और मसीह का यह प्रतिनिधि यीशु का प्रतिनिधित्व करने में असफल हो जाये।

अधिकतर समय अनुशासन औपचारिक और गुप्त रूप से होता है। मसीह में अगर कोई भाई या बहिन पाप करता है, तो दूसरे भाई या बहिन उसे प्रेम से चुपचाप समझा देते हैं।

बहुत ही कम यह प्रक्रिया औपचारिक और सार्वजनिक रूप में होती है जिसे लोग "चर्च अनुशासन" के नाम से जानते हैं और इसे ही चर्च से निष्कासित करना कहते हैं। औपचारिक चर्च अनुशासन वह उचित कार्यवाही है जिसे तब अपनाया जाता है जब कोई चर्च सदस्य अपने जीवन से यीशु का प्रस्तुतिकरण देने में असफल रहता है और उसका यह व्यवहार इतना आम हो जाता है कि चर्च उस पर भरोसा नहीं कर सकता कि अब वह मसीही रहा हो। उस समय चर्च को उस व्यक्ति के विश्वास की पुष्टि देना बंद कर देना चाहिये। यह "सुसमाचारिय ढांचा" है ऐसी पद्वति है जिस पर हमने अंतिम अध्याय में विचार किया है। यह उस सूची पर कार्य नहीं करता कि कौन से पाप चर्च अनुशासन लागू करने की श्रेणी में आते हैं। बस यही प्रश्न यह पूछा जा सकता है कि क्या चर्च निरंतर किसी व्यक्ति के विश्वास सार्वजनिक पुष्टी दे सकता है कि उसका विश्वास सच्चा है?

इस ढांचे के अंतर्गत क्या हम कुछ विशेष कह सकते हैं कि कब चर्च अनुशासन आवश्यक होता है?

कौन से पाप अपेक्षित हैं और कौन से नहीं

कुछ क्षण पहले मैंने यह संकेत दिया था कि कौन से पाप गुप्त में संबोधित किये जाने योग्य हैं और किसमें पूरी मंडली को सम्मिलित होना आवश्यक है। यहां एक समानांतर अवलोकन है: मसीही जन द्वारा किये गये पाप और गैर मसीही जन द्वारा किये गये पाप के मध्य में कुछ अंतर पाया जाता है। यह तो तय है कि अनौपचारिक और गुप्त रूप से अनुशासन दोनों प्रकार के लोगों के उपर लागू होता है। परंतु औपचारिक अनुशासन या निर्वासन आपस में

जुड़े हुये हैं, बड़े रूप में कहें तो, जब एक व्यक्ति प्रथम क्षेत्र से द्वितीय क्षेत्र में जाता है अर्थात उन पापों की ओर जिनके बारे में हमने सोचा नहीं था।

कोई व्यक्ति एक साधारण झूठ बोलकर पश्चाताप करता है और कोई व्यक्ति झूठ पर अपनी जिंदगी बनाता है और झूठ से अलग भी नहीं होना चाहता। उदाहरण के लिये, ऐसे दो प्रकार के मसीही जनों के झूठ की तुलना कीजिये। पहला मसीहि डींगे मारता है कि उसे एक बेहद आकर्षक नौकरी का प्रस्ताव आया, जो हकीकत में कभी नहीं आया। बाद में, उसने उस झूठ से पश्चाताप किया। दूसरा मसीहि, अपनी पूरी जिविका को झूठ की बुनियाद पर बनाता है; बाद में, जब बात सामने आती है तब भी वह उसी झूठ पर दृढता से बना रहता है। पहला झूठ, उस प्रकार का पाप है कि ऐसे आचरण की अपेक्षा हमको उस मसीही जन से नहीं थी। पौलुस की भाषा में ''पुराना मनुष्यत्व'' एक विश्वासी के मन में सिर उठाता है और ''नये मनुष्यत्व'' पर हावी होना चाहता है। परंतु नया मनुष्यत्व फिर से संघर्ष करता है। दूसरे झूठ की अपेक्षा, हमने एक पवित्र आत्मा पाये व्यक्ति से नहीं की थी। पुराने और नये मनुष्यत्व में संघर्ष का कोई प्रमाण नहीं है। पुराना मनुष्यत्व ही संघर्षरत रहता है।

वे मसीही जिनके भीतर पवित्र आत्मा का निवास होता है, वे लंबे समय तक किसी प्रगट होने वाले पाप में नहीं बने रह सकते। वे अन्त में पवित्र आत्मा की प्रेरणा से इतने विकल हो जाते हैं कि वे अब सही चीज ही करना चाहते हैं।

औपचारिक अनुशासन या चर्च निर्वासन उस व्यक्ति पर किया जा सकता है जो किसी ज्ञात पाप में बहुत समय से पड़ा हुआ हो। यह प्रमाण तो नहीं मिल पाता कि आत्मा

उसको असहज बना रही हो, पर पकड़े जाने की भावना उसको असहज बना देती है। फिर भी, पाप के प्रति आज्ञाकारी बने रहना, पाप की इच्छाओं का *लक्षण* है।

सारे पाप गलत हैं। सभी पाप यीशु का गलत प्रतिनिधित्व करते हैं। परन्तु कुछ पाप या पाप के कुछ ऐसे तरीके किसी व्यक्ति के प्रति संपूर्ण मंडली का विश्वास खो देते हैं। एक समय पर उस व्यक्ति के शब्द विश्वसनीयता खो देते हैं। वह सदस्य कह सकता है कि उसने "पश्चाताप" किया है या वह "अच्छा हो गया" है "बुराई से दूर हो गया है," पर अब चर्च उसके शब्दों पर भरोसा नहीं कर सकता। क्योंकि उसके जीवन में बहुत विरोधाभास है। इसलिये चर्च उसे प्रभु भोज लेने से वंचित कर लोगों के सामने इसकी पुष्टि करती है। यहां से उसका पासपोर्ट छिन जाता है और इस बात की घोषणा हो जाती है कि चर्च अब मसीह के राज्य में उसकी नागरिकता मिलने की पुष्टि नहीं कर सकता।

पास्टरीय और स्थितिजन्य संवेदनशीलता

सुसमाचार पर आधारित इस ढांचे के अनुसार अगर चर्च अनुशासन को देखें तो यह पापों की सूची के अनुसार नहीं चलता परंतु इस प्रश्न का उत्तर उसे देना होता है कि क्या चर्च पास्टरीय और निर्मित स्थिति के अनुसार संवेदनशीलता को देखते हुये उस व्यक्ति के विश्वास की पुष्टि करता रहेगा। धर्मशास्त्र यह देखने सदैव हमारा मार्गदर्शन करता है कि पाप क्या है, पर यह तय करने के लिये कि कौन से पापों को अनुशासित करने की और किस हद तक अनुशासित करने आवश्यकता होगी यह तय करने के लिए पास्टरीय देखभाल की आवश्यकता होती है।

दो अलग अलग प्रकार के लोग समान पाप कर सकते हैं। परंतु परिस्थितियां एक पास्टर और मंडली के विवेक को बतलायेगीं कि उस पाप का अर्थ क्या है। एक अकांउटेंट जो टैक्स चुकाने में टाल मटोल करता है वह ज्यादा समस्या पैदा करता है बजाय उनके जिन्हें अज्ञानतावश टैक्स की जानकारी ही नहीं है। क्योंकि अकांउटेंट बिल्कुल जानता है कि वह क्या कर रहा है और उसके पास ऐसा करने के साधन हैं। एक अविवाहित जोड़ा जो व्यभिचार में पांचवी बार लिप्त पाया जाता है उसे अधिक अनुशासित करने की जरूरत है बजाय उस जोडे के जो पहली बार इस पाप में पाये गये। आम तौर पर बिल्कुल नये बने मसीही जन हैं वे पुराने विश्वासियों की तुलना में अधिक बड़े पापों में फिसल जाने की संभावना रखते हैं।

तो जितना व्यक्तिपरक यह दिखता है, उतनी ही अलग अलग परिस्थितियां भी इस पर प्रभाव डालती हैं कि एक मसीही जन से हम क्या *अपेक्षा* रखते हैं। अपेक्षा रखा जाना भी एक भूमिका निभाता है, विशेषकर जब हम वर्तमान और आने वाले युग के मिश्रित काल में रह रहे हैं। जैसा मार्टिन लूथर ने कहा, इस युग में मसीही जन पापमय भी हैं और धर्मी भी हैं। हमारे भीतर नये और पुराने मनुष्यत्व का संघर्ष चलता रहता है और हम यह जानते हैं कि अलग अलग परिस्थितियों में (जैसे विश्वास के युग में; जितनी शिक्षा हमें मिली है), वह नये मनुष्यत्व या पुराने मनुष्यत्व को मजबूत स्थिति देगी। जैसा कि चर्च अनुशासन, केवल यह प्रश्न पूछना नहीं है, "कौनसा पाप किया गया?" कि मानो हमारे पास कोई वजन तौलने वाली मशीन हो जो यह बताये कि यह पाप भारी है जिसके लिये चर्च अनुशासन लागू किया जाना अति आवश्यक है। इसके बजाय, पाप हमेशा इस तरह नियंत्रित किये जा सकते हैं कि एक तरफ पाप से पश्चाताप किये जाने के प्रमाण मिले, न केवल एक विशेष प्रकार का पाप

बल्कि एक व्यक्ति के जीवन में संपूर्ण रूप में पश्चाताप की अवस्था दिखाई दे। इसलिए, भावी अनुशासन का विश्लेषण करते हुये, हमेशा ही, यह जांचना होगा कि एक व्यक्ति का पूर्ण रूप से पश्चाताप करना और वे पाप जिनके लिये पश्चाताप किया जा रहा है, के उपर प्रश्न पूछे जा सकते हैं।

मत्ती 18 में यीशु के अनुसार जो निर्देशात्मक पंक्तियां लिखी गयी हैं उसमें चर्च में दो या तीन लोगों की गवाही किसी मसले का हल करने के लिये आवश्यक है। (मत्ती 18:16)। इस पद को व्यवस्थाविवरण 19 से लिया गया था, जो यह दिखाता है कि परमेश्वर ने इजरायलियों के विरूद्व आपराधिक मुकदमा चलाये जाने को बहुत सावधानी पूर्वक और उचित न्याय मिले, ऐसी व्यवस्था ठहराई। यीशु का तात्पर्य था कि चर्च के अगुवे और सदस्य एक दूसरे के मसलों को बहुत सावधानीपूर्वक हल करें। उन्हें प्रमाणों को मानना चाहिये, कहानी के अलग अलग पहलूओं को देखना चाहिये और स्थितियों की गंभीरता को मापना चाहिये। उन्हें न्याय करने में शीघ्रता नहीं करना चाहिये। मसीहियों को धीरे धीरे चलना चाहिये, विचारपूर्वक और दयालूता के साथ व्यवहार करना चाहिये।

दो या तीन गवाह या (अंततः चर्च) को इस पैमाने से पाप या पाप की पद्वति को नापना चाहियेः कि क्या व्यक्ति बार बार पश्चाताप करने से इंकार करता है, कि जिससे व्यक्ति के विश्वास पर संदेह हो और उसकी पुष्टि नहीं की जा सके? क्या वह व्यक्ति अपने पाप के लिये इतनी कड़ाई से मुठ्ठी भींच लेता है कि अब उसके विश्वास पर संदेह नहीं करना चाहिये? चर्च द्वारा विवेचना किये जाने पर, जितनी भी परिस्थितियां सामने हैं उन पर विचार किया जाना आवश्यक है जैसेः

- वह व्यक्ति कितने समय से मसीही है?
- उसने कौनसी शिक्षा पाई है?
- क्या पापी स्वीकार करता है कि उसका कृत्य गलत था?
- क्या वह अपने पाप को निष्कपटता से स्वीकार करता है या उसकी स्वीकारोक्ति में नाराजगी का स्वर है?
- क्या वह अपना पाप जल्द मान लेता है या उससे उगलवाना पड़ता है?
- क्या वह अपने सारे पाप एक साथ मान लेता है या हमें उन्हें एक के बाद एक उसके मन में से निकलवाने पड़ते हैं?
- क्या अभी भी संभावना है कि वह कुछ जानकारी छिपा रहा है?
- क्या यह उसका तरिका है, क्या यह उसकी विशिष्टता है?
- क्या वह अपने आप में सुधार के लिये तैयार है?
- क्या वह परामर्श का स्वागत करता है कि पाप के विरूद्ध कैसे लड़ा जाये, या वह परामर्श से इंकार करता है, और समझता है कि वह इससे निपटने में भली प्रकार से सक्षम है?

• जब हम उसके पाप की चर्चा करते हैं, तो क्या ऐसा लगता है कि वह पाप के विरूद्ध हमारे साथ खड़ा है, या वह प्रतिरक्षात्मक हो रहा है? दूसरे शब्दों में वह कह रहा हो, ''आप बिल्कुल सही कह रहे हो। यह सचमुच दुखदायी है। अब मैं क्या करूं?'' या वह कह रहा हो, ''अरे, चिंता की कोई बात नहीं है। सब ठीक है। हम देख लेंगे।''

• क्या उसके परिवार या व्यक्तिगत इतिहास में ऐसी बातें रही हैं जो उसके पाप को ज्यादा गलत नहीं बताती हो पर मामूली पाप समझती हो?

• क्या वह इस पाप में उनके कारण पड़ा, जिन पर उसने पूरा भरोसा किया था?

इन प्रश्नों के उत्तर किसी चर्च या उसके अगुए को किसी एक या अन्य दिशा में निर्णय लेने के लिये बाध्य नहीं कर सकते। परंतु ऐसा हो सकता है कि इतने सारे तथ्यों के प्रकाश में हम उस व्यक्ति को तौभी मसीही जन के रूप में देखते रहें भले ही उसने पाप किया हो।

बाह्य, गंभीर, अपश्चातापी

यीशु द्वारा व्यवस्थाविवरण 19 का प्रयोग और पौलुस द्वारा कुरूंथियों को ''न्याय करने'' और ''मामलों की जांच'' करने कि लिये जो निर्देश दिये गये हैं, वे हमें दो या उससे अधिक रास्ते सुझाते हैं (1 कुरूं 5:12; 6:2–5)। पहला, क्या यीशु का कहने का तात्पर्य है कि चर्च इस संदर्भ में इस तरह न्याय करे जैसा हमने अभी उपर वर्णन किया है, भले ही यीशु बदले की भावना से प्रेरित और स्वयं को धार्मिक ठहराने की मंशा से किये गये न्याय के लिये मना करते हैं (मत्ती 7: 1–2)।

दूसरा, चर्च अनुशासन में, जैसे कोर्टरूम में होता है, न्याय की प्रक्रिया, इस बात पर निर्भर होती है कि लोग अपनी आंखों से क्या देखते हैं और अपने कानों से क्या सुनते हैं। परमेश्वर ने मसीहियों को एक्स रे वाली आंखें प्रदान नहीं की है कि वे सीधे हृदयों में झांक सकें। उसने सभी मनुष्यों को आंखें, कान, दिमाग दिया है कि वे किसी व्यक्ति के जीवन के फल को पहचान सकें और अपने विवेक का इस्तेमाल कर सकें (1 कुरू 5: 12; मत्ती 3:8; 7:16–20; 12:33; 21:43)। गैर मसीही लोग, निश्चित ही मसीही लोगों का परीक्षण करने के लिये और उनको जांचने के लिये अपनी आंखें, कान, दिमाग का प्रयोग कर रहे हैं; मसीहियों को भी ऐसा करना चाहिये। यह यीशु के नाम की अभिरक्षा का भाग है, और पापी जनों, गैर मसीहीयों से और चर्च से प्रेम करने का भी भाग हैं ।

यीशु चर्चेस को यह अधिकार देता है कि वे लोगों के जीवनों से प्रगट होने वाले बाह्य फल के अनुसार सार्वजनिक टिप्पणियां कर सकते हैं।

दूसरे शब्दों में, मैं विश्वास करता हूं कि हम इस विषय पर भी थोड़ा बोल सकते हैं कि किस प्रकार के पापों को चर्च द्वारा अनुशासित किया जाना चाहिये "जब अपेक्षित पाप से कोई सदस्य अनेपक्षित पापों की ओर बढ़ जाये।" अगर सैद्वांतिक नजरिये से यह सिद्व योजना न भी हो तौभी यह थोड़ा स्तर तो बनाये रखती है। औपचारिक अनुशासन उन पापों के उपर लागू किया जाना चाहिये जो *बाह्य, गंभीर, और अपश्चातापी* हैं।

प्रथम, पाप का *बाहरी* प्रगटीकरण अवश्य है। चर्चेस को हर समय किसी को चेतावनी नहीं देते रहना है जब उन्हें किसी के हृदय में लालच या घमंड का संदेह हो। जब

यह आंखों से दिखाई देने लगे या कानों से सुनाई पड़े, तब ही इस पर टिप्पणी होना चाहिये।

दूसरा, पाप *गंभीर* हो। चर्च और उसके अगुओं को हर पाप का पीछा नहीं करते रहना है। चर्च के जीवन में प्रेम के लिये इतना स्थान अवश्य होना चाहिये, क्योंकि प्रेम अनेक "पापों को ढांप देता है" (1 पतरस 4:8)। हम धन्यवादी हैं, कि परमेश्वर हर समय जब जब हम पाप करते हैं। हमें अनुशासित नहीं करते हैं।

अंत में:, पाप के लिये अगर *प्रायश्चित* नहीं किया गया हो। एक व्यक्ति जो पाप में लिप्त हो और परमेश्वर के वचन में दी गयी आज्ञा से सामना होने के उपरांत भी उस पाप से मुंह नहीं फेरना चाहता हो। कुल मिलाकर, वह यीशु से बढ़कर, पाप को महत्व दे रहा हो। अधिक या कम रूप में, एक व्यक्ति को चर्च से निष्कासित करते समय इन सभी तथ्यों पर चर्च को विश्वास करना चाहिये।

यीशु और पौलुस की और से क्यों भिन्न भिन्न तरीके बताए गए?

अनुशासन की राह में एक और जटिल मुद्दा है जिसे हमें मानना होगा। यह वह पत्थर है जो हमारे सतकर्ता नहीं बरतने पर, उलझनों के पहाड़ खड़े कर सकता है। प्रश्न यह है कि पौलुस की 1 कुरूंथियों 5 में बताई गई पद्धति यीशु की मत्ती 18 में बताई पद्धति से अलग क्यों है।

हम स्मरण करते है कि पौलुस चर्च को उस प्रकार के पाप को सहन करने के लिये फटकारता है अर्थात "ऐसा व्यभिचार जो अन्यजातियों में भी नहीं होता, कि एक मनुष्य

अपने पिता की पत्नी को रखता है'' (1 कुरूंथियों 5:1) वह चर्च को ऐसा नहीं कहता कि उस पुरूष को चेतावनी दें ताकि वह पश्चाताप करे। वह उन्हें सिर्फ उस पुरूष को निकाल देने के लिये कहता है (पद 2) । उसके पश्चाताप को भी जांचने की आवश्यकता नहीं है। उस पापी मनुष्य और चर्च के अगुओं के बीच बातचीत की भी जरूरत नहीं है। उसके विरूद्व तो केवल कार्यवाही होना है: ''उस कुकर्मी को अपने बीच में से निकाल दो'' (पद 13)। एक ओर चर्च से निर्वासित करने की राह में, यीशु कई बार चेतावनी देने की सलाह देते हैं। दोनों ही पद्वतियों के मध्य अंतर दिखाई देता है।

हमारे सामने परीक्षा उत्पन्न होती है कि हम यह कैसे समझाये कि यीशु और पौलुस दोनों के दिमाग में लोगों द्वारा किये गये पाप अलग अलग प्रकार से उपस्थित थे। यीशु एक साधारण अंर्तवैयक्तिक पाप का उदाहरण देते हैं। जबकि पौलुस पापी द्वारा भारी कीमत चुकाने के पक्ष में है। हमें बड़े पापों के लिये पूर्व में वर्णित प्रक्रिया अपनायी जाना चाहिये और छोटे पापों के लिये दूसरी पद्वति अपनाना चाहिये।

अठारवीं और उन्नीसवीं सदी में चर्च अनुशासन के लेखकों ने इन पद्वतियों पर भी कभी कभी लिखा है। उन्होंने 1 कुरूंथियों 5:1 के मसले पर दो बातों पर विशेष ध्यान दिया: पहली, अगर पाप सार्वजनिक रूप से लज्जाजनक हो (''जो अन्यजातियों में भी सहनयोग्य न हो''); दूसरी, पौलुस एकदम से निर्वासित किये जाने के लिये कहता है – कोई चेतावनी नहीं – यह सुझाता है कि उस समय वह यह भी नहीं देखना चाहता कि वह व्यक्ति पश्चाताप कर रहा है या नहीं, चूंकि पाप की प्रकृति बेहद लज्जाजनक है इसलिये ऐसी कार्यवाही करना आवश्यक ही है। यीशु की प्रतिष्ठा अधिक है इसलिये चर्च यीशु की प्रतिष्ठा बचाये रखने के

लिये उनकी बतायी पद्वति को अमल में लाना आवश्यक समझता है, जिसमें व्यक्ति पश्चाताप भी करता है।

मैं यीशु की प्रतिष्ठा के विषय पर निश्चित ही सहानूभूति पूर्वक विचार करता हूं ताकि चर्च अनुशासन के लिये तैयार की गयी संपूर्ण रूपरेखा को स्पष्ट कर सकूं। पर दो एक कारणों से इस ऐतिहासिक स्पष्टीकरण को मैं अकाट्य नहीं मानता हूं। जो शुरूवात करते हैं उनके लिए चर्च से निर्वासित करने की कार्यवाही संसार के मापदंड के आधार पर की जाती है। ऐसे मापदंड जो पवित्र नहीं है और जो हमेशा बदलते रहते हैं। किसी समाज में उठा विवाद, दूसरे समाज के लिये प्रतिष्ठा का कारण होता है जैसे (गर्भपात और समलैंगिकता के मुद्दे)। साथ ही, ऐसे लोग जिन पर चर्च भरोसा करता है कि अगर वे पश्चाताप करेंगे, तो उन को निष्कासित करने का नुकसान होगा अर्थात उन्हें शैतान के हाथों में सौंपना। क्या यह मसीही जन के प्रति अन्याय नहीं कहलायेगा और संसार के प्रति बेईमानी नहीं कहलायेगी? चर्चे, जिनको मसीही जन मानता है, उसको उन्हें निर्वासित नहीं करना चाहिये। ऐसा करना आवश्यक रूप से वैधानिक है, क्योंकि यह चर्च सदस्यता के लिये एक कसौटी सामने रखता है कि ''पश्चाताप और विश्वास'' ही पर्याप्त नहीं पर ''पश्चाताप, विश्वास और दुबारा वही पाप कभी नहीं करना'' भी उनके लिये आवश्यक है।

पौलुस जो त्वरित निष्कासन का मार्ग 1 कुरूंथियों में अपनाने को कहता है, वह मत्ती 18 में प्रगट नहीं होता है। ऐसा मार्ग तो ''निश्चित ही बड़े पापों'' के लिये अपनाया जायेगा। हमें यह स्मरण रखना है कि पूरी तरह पाप के ''भारीपन'' पर केंद्रित नहीं होना है। स्मरण रखे कि निर्वासन के पूर्व यह देखना अति महत्वपूर्ण होगा कि किये गये पाप और

उसके बाद उसके लिये व्यक्ति के पश्चाताप करने के बीच कितनी सक्रियता बनी हुई है। हमें पाप नापने का कोई पैमाना इस्तेमाल नहीं करना है। यह पाप और उसके लिये पश्चाताप करने के बीच जो संतुलन है, वह निर्णायक है। आखिरकार पश्चाताप करने वाले मसीही जन भी पाप करते हैं। हमेशा ही यह प्रश्न मौजूद रहता है कि क्यों पाप के लिये कभी कोई खास और कभी सिर्फ सामान्य प्रकार का पश्चाताप करना होता है? इस प्रश्न का उत्तर देने में पास्टरीय दृष्टिकोण और स्थिति की संवेदनशीलता को भी देखना होता है।

तो फिर, तुरन्त निर्वासित कर देने के लिये कौन से मापदंड अपनाना चाहिये? 1 कुरूंथियों 5 और 6 का सावधानीपूर्ण निरीक्षण हमें उत्तर को ढूंढने में सहायता करेगा :

5:1–2 यहां तक सुनने में आता है, कि तुम में व्यभिचार होता है, वरन ऐसा व्यभिचार जो अन्यजातियों में भी नहीं होता, कि एक मनुष्य अपने पिता की पत्नी को रखता है। और तुम शोक तो नहीं करते, जिस से ऐसा काम करने वाला तुम्हारे बीच में से निकाला जाता, परन्तु घमण्ड करते हो।

5:4–5 कि जब तुम, और मेरी आत्मा, हमारे प्रभु यीशु की सामर्थ के साथ इकट्ठे हो, तो ऐसा मनुष्य, हमारे प्रभु यीशु के नाम से शरीर के विनाश के लिये शैतान को सौंपा जाए, ताकि उस की आत्मा प्रभु यीशु के दिन में उद्धार पाए।

5:9–11 मैं ने अपनी पत्री में तुम्हें लिखा है, कि व्यभिचारियों की संगति न करना। यह नहीं, कि तुम बिलकुल इस जगत के व्यभिचारियों, या लोभियों, या

अन्धेर करने वालों, या मूर्तिपूजकों की संगति न करोय क्योंकि इस दशा में तो तुम्हें जगत में से निकल जाना ही पड़ता। मेरा कहना यह हैय कि यदि कोई भाई कहला कर, व्यभिचारी, या लोभी, या मूर्तिपूजक, या गाली देने वाला, या पियक्कड़, या अन्धेर करने वाला हो, तो उस की संगति मत करनाय वरन ऐसे मनुष्य के साथ खाना भी न खाना।

5:12 क्योंकि मुझे बाहर वालों का न्याय करने से क्या काम? क्या तुम भीतर वालों का न्याय नहीं करते?

5:13 परन्तु बाहर वालों का न्याय परमेश्वर करता हैरू इसलिये उस कुकर्मी को अपने बीच में से निकाल दो।

6:9–11 क्या तुम नहीं जानते, कि अन्यायी लोग परमेश्वर के राज्य के वारिस न होंगे? धोखा न खाओ, न वेश्यागामी, न मूर्तिपूजक, न परस्त्रीगामी, न लुच्चे, न पुरूषगामी, न चोर, न लोभी, न पियक्कड़, न गाली देने वाले, न अन्धेर करने वाले परमेश्वर के राज्य के वारिस होंगे। और तुम में से कितने ऐसे ही थे, परन्तु तुम प्रभु यीशु मसीह के नाम से और हमारे परमेश्वर के आत्मा से धोए गए, और पवित्र हुए और धर्मी ठहरे।

मनुष्य का पाप 5:1 के अनुसार ''सार्वजनिक रूप से विक्षोभकारी'' या ''सचमुच बहुत बुरा'' हो सकता है। पर बात यह नहीं है। बल्कि पौलुस इन पदों में दो प्रकार के लोगों की श्रेणियां बता रहा हैः वे जो पश्चाताप करने के लिये पहचाने जाते हैं। वे जो बिल्कुल

पश्चाताप नहीं करते हैं। पश्चाताप करने वाले चर्च के अंदर ठहरते हैं; जो पश्चाताप से इंकार करते हैं वे परमेश्वर के राज्य में कभी प्रवेश नहीं पा सकेंगे।

यह देखने मे हमें आसानी होगी अगर हम इन पदों को आगे भी पढ़ें। अंतिम पद दो श्रेणियों को स्पष्ट दिखाता है: ''अधर्मी'' लोग परमेश्वर के राज्य के उत्तराधिकारी नहीं होंगे, दूसरे वे लोग, जो विश्वासी हैं और अपने में बदलाव दिखाना चाहते हैं: ''और तुम में से कितने ऐसे ही थे।'' अधर्मियों के लिये, पौलुस, किंन्हीं विशेष प्रकार के पाप को चिंन्हित नहीं करता है पर वह लोगों को उन पापों के नाम से संबोधित करता है। वह विशेषण का प्रयोग नहीं करता है, वह संज्ञा उपयोग में लाता है: ''यौन संबंधों में अनैतिक,'' ''लोभी,'' ''मूर्तिपूजक,'' ''निंदक,'' ''पियक्कड़,'' ''ठग'' (1 कुरूंथियों 6:9–11)। ये लोग इन पापों से जाने जाते हैं। ये पाप इनको परिभाषित करते हैं। अध्याय 5 के अंतिम वाक्य में यही चरित्र चित्रण प्रगट होता है: ''कुकर्मी को अपने बीच में से निकाल दो''(5:13)। वह मनुष्य ''कुकर्मी'' है। इस पद के पहले वाले पद में लिखा है ऐसा व्यक्ति चर्च का नहीं हो सकता (5:12)।

यह देखना मुश्किल नहीं है कि पौलुस अध्याय 5 और 6 में दी गई सूची को जोड़ने का प्रयास करता है: यौन संबंधों में लिप्त अनैतिक लोग, लोभी, मूर्तिपूजक, निंदक, पियक्कड़, ठग (5:9–11)। (हमें इस सूची को पर्याप्त नहीं समझना चाहिये। अध्याय 6 में और भी प्रकार के पापों की श्रेणी को जोड़ा गया है। यह एक प्रतिकात्मक सूची है)। पुनः चर्च को उन लोगों के साथ सहभागिता नहीं रखना चाहिये जो विशेषतया पश्चाताप नहीं करते हैं: ''मैंने अपनी पत्री में लिखा है कि व्यभिचारियों की संगति न करना'' (पद 9)।

अध्याय 5 का व्यक्ति ठीक ऐसा ही है: विशेषतया पश्चाताप नहीं करने वाला। उसकी देह के विनाश हेतु उसे शैतान को सौंपा जाना चाहिये क्योंकि उसकी देह अभी भी उसके जीवन में प्रथम स्थान रखती है (5:5)। उसे दंड देकर चर्च उसके कार्यो की भर्त्सना नहीं कर रहा है बल्कि उसे स्वीकृति दे रहा है (5:2)। जबकि वह निरंतर अनैतिक बना हुआ ही है (5:1)।

संक्षिप्त में, पौलुस का कहना है कि ऐसे अपश्चातापी जन को चर्च से बहिष्कृत कर देना चाहिये क्योंकि वह लाक्षणिक रूप में *अपश्चातापी* हैं। उसके जो मौजूदा लक्षण हैं, वे बताते हैं कि वह परमेश्वर के राज्य का अधिकारी नहीं हो सकता, और इसलिये चर्च को अब उसे निकाल देना चाहिये ताकि उसकी आत्मा को चेतावनी दी जा सके और आत्मा को नष्ट होने से बचाया जा सके। क्या पौलुस के पास हमारी तुलना में ऐसे व्यक्ति की अधिक सूचना है? शायद। हमें यह पूर्ण रूप से स्पष्ट नहीं है कि कैसे पौलुस इस निष्कर्ष पर पहुंचा, पर उसने इस निष्कर्ष को निकाला: कि ऐसा जन मसीही कहलाने के योग्य नहीं है। वह "कुकर्मी है" (5:13)। वह अधर्मियों की "श्रेणी" में है (6:9)।

इस बिंदु पर पहुंचकर, पौलुस की 1 कुरूंथियों और यीशु की मत्ती 18 में प्रगट की गई पद्धतियों के बीच अंतर दिखाई देना आरंभ हो जाता है। जहां यीशु की बताई पद्धति का अंत होता है, वहां पौलुस द्वारा पापी मनुष्य के लिये लगाये गये अनुमान कम पड़ने लगते हैं। पौलुस पहले ही मान लेता है कि वह व्यक्ति पश्चाताप करेगा ही नहीं। जबकि यीशु की पद्धति में यह तय करने की गुंजाइश है कि वह व्यक्ति सदा अपश्चातापी बना रहेगा या उससे कोई आशा भी है। जबकि पौलुस अपनी पद्धति में ऐसा कोई स्थान नहीं छोड़ता।

इन दोनों अध्यायों में एक और अंतर है कि कितनी अधिक जानकारी उपलब्ध है और उस पर कितने लोगों की सहमति है। मत्ती 18 में, एक व्यक्ति जानता तो है कि पाप घटित हुआ है, पर उसे दो या तीन लोग और चाहिये जो उसके साथ सहमत हो सके। उसके बाद वह चाहता है कि संपूर्ण चर्च उसके साथ सहमत हो। दूसरी ओर, 1 कुरूंथियों 5 में, पूरा चर्च जानता है कि क्या हो रहा है। फिर से, यह मत्ती 18 की पद्धति के निष्कर्ष पर कम पड़ता है।

इस कारण कलीसियाओं को औसत पापों को संबोधित करने के लिये मत्ती 18 का और बड़े पापों को संबोधित करने के लिये 1 कुरूंथियों 5 को नमूना नहीं बनाना चाहिये। जबकि, चर्चेस को ''पाप बनाम पश्चाताप'' के पैमाने से दोनों को तौलना चाहिये। अगर उसके पाप अक्षम्य क्यों न हो, चर्च उस व्यक्ति को समय देकर यह तय करे कि वह कभी भी पश्चाताप नहीं करने वालों की श्रेणी का है। जिस समय पाप उजागर हुआ है, उसी समय चर्च उसके बारे में राय नहीं बना सकता। सदस्यों को उससे बात किये जाने की आवश्यकता है और उसे कोई चुनौती या चेतावनी देना चाहिये।

ऐसी परीस्थिती की कल्पना करना कठिन नहीं है जिसमें 1 कुरूंथियों 5 या 6 में बताई गयी पापों की सूची में से कोई व्यक्ति उस पाप में लिप्त हो, तब चर्च से अपेक्षा है कि वह सही ढंग से मत्ती 18 की प्रक्रिया प्रारंभ करे। उदाहरण के लिए कल्पना कीजिये, कि आप के चर्च में कोई एक या अधिक पाप में लिप्त हो, वह पियक्कड़ भी हो और अनेक प्रकार की अनैतिकता में भी लिप्त हो। मैं मानता हूं कि ऐसे लोगों को बार बार चेतावनी दी जा सकती है, जैसे मत्ती 18 में बतलाया गया है, इसके पहले कि चर्च से निष्कासन आरंभ हो।

तो पौलुस के इस परीक्षण का क्या होता है: ''कि इस व्यक्ति का पाप अन्यजातियों में भी असहनीय है?'' इससे इंकार नहीं है कि उस व्यक्ति का पाप सार्वजनिक तौर पर निंदनीय है। पर मुझे पौलुस के शब्द कुरूंथियों को जगाने के लिये उनके सिर पर मारे गये जोरदार तमाचे के समान लगते हैं। साफ रूप में, उन्हें जो देखना चाहिये उसे वे नहीं देखते। पौलुस के शब्द मुझे किसी धर्मशास्त्री जैसे नहीं लगते जो पाप की एक संपूर्ण श्रेणी अलग तय कर रहा हो, जिसके आधार पर वह चर्च सदस्यता और निर्वासन के नियमों को बदल सके। अगर ऐसा होता तो मैं सोचता हूं कि वह एक से अधिक इससे जुड़े शब्दों का प्रस्ताव रखता।

एक अक्षम कार्य

यहां 1 कुरूंथियों 5 में दिये संपूर्ण घटनाक्रम को देखने का एक और नजरिया है। इसमें कोई संदेह नहीं कि कुछ पाप, विस्तृत होते हैं (जैसे किसी का शोषण किया हो या हत्या का अपराध हो)। या घृणास्पद कोई कार्य किया हो (जैसे प्रताड़ना या बलात्कार)। इसके बाद वह व्यक्ति एकदम से क्षमा मांगे तो उस पर विश्वास करना असंभव होगा। ऐसा नहीं है कि ये पाप क्षमा नहीं किये जा सकते, या वह व्यक्ति भी एकदम से पश्चातापी नहीं हो सकता। पर कुछ समय बीत जाने देने की जरूरत है ताकि इसके पहले कि चर्च उसे अपना उत्तरदायित्व समझते हुये क्षमा प्रदान करे उस व्यक्ति में पश्चाताप के फल दिखाई देने लग जायें (प्रेरितों 8:17–24 के उदाहरण को देखिये)। जो व्यक्ति आदतन स्वेच्छा से पाप में समय बिता रहा हो, चर्च, उसके शब्दों पर विश्वास नहीं कर सकता। उसके पाप की प्रकृति चर्च की राह में बाधा बनती है इसलिये वह चर्च को बाध्य करती है और चर्च के पास थोड़े समय के लिये

उसे निष्कासित करने के अलावा कोई विकल्प नहीं बचता। पाप का पलड़ा भारी लगता है और पश्चाताप का पलड़ा हल्का लगता है। पाप अपने में इतना धोखा शामिल कर लेता है कि व्यक्ति द्वारा दिये गये सारे सकारात्मक प्रमाण दुर्बल पड़ जाते हैं।

ऐसे कुछ पाप हैं जिन्हें वास्तव में एक मसीही जन न करे, ऐसी *अपेक्षा* की जाती है। उन पापों को करना अर्थात वह व्यक्ति मसीही नहीं है और कम से कम चर्च उसके साथ कैसा बर्ताव करेगा, यह अनिश्चित है और कब वह व्यक्ति पुनः चर्च का विश्वास जीत पायेगा, यह भी अनिश्चित है । पौलुस ने एक व्यक्ति द्वारा किये गये पाप, जिसमें वह अपने पिता की पत्नी के साथ संबंध रखता है, को इसी दृष्टिकोण से देखा।

वर्षो पहले मैं नियमित रूप से एक जवान लड़के से मिलता था, जो पिछले वर्ष एक शर्मनाक अपराधिक गतिविधि के कारण पकड़ा गया। स्थानीय स्तर पर भी यह खबर बनी। वह चर्च में एक साल से बहुत सक्रिय रहा, परंतु गुप्त रूप से उस गतिविधि में संलग्न था। जब वह लड़का पकड़ा गया तब लोगों ने उसके पाप के विषय में जाना, एवं तुरंत उसे चर्च की सदस्यता से बर्खास्त कर दिया गया। वह लड़का रोया और बहुत पछताया। परंतु चूंकि वह दोहरा जीवन जी रहा था, इसलिये चर्च उसके पश्चाताप के शब्दों पर भरोसा नहीं कर सकता था। कम से कम उस समय के लिये तो नहीं कर सकता था। उन्होंने उसे निर्वासित करके उसके पश्चाताप की परीक्षा ली, न कि निर्वासित करने से पहले। परंतु, मैं मानता हूं कि चर्च ने ठीक किया। तो इस जवान व्यक्ति के कार्य, दूसरी भेड़ों के लिये भी खतरा उत्पन्न कर सकते थे। इस संसार में मसीह की गवाही को भी धक्का पहुंचता। अतः सारी

स्थिति को देखकर त्वरित निर्णय लिया गया। इतनी शीघ्रता दिखाकर चर्च ने सही किया क्योंकि ''अन्यायी लोग परमेश्वर के राज्य के वारिस नहीं होंगे'' (1 कुरूंथियों 6:9) ।

अतः मैंने मत्ती 18 और 1 कुरूंथियों 5 के मेल पर विश्वास किया जिनके द्वारा यह समझाया गया है कि चर्च को इन तीन निष्कर्षों में से किसी एक पर पहुंचना आवश्यक होता है इसके पहले कि वह तय करे कि अब कार्यवाही करने का समय हैः

• इसके पहले कि चर्च कोई अनुशासनात्मक कारवाई करे, चर्च को इस बात पर सहमत होना चाहिये कि एक व्यक्ति

दिल से पश्चाताप कर रहा है, (इस सिद्वांत का कोई एकमात्र विकल्प नहीं है)।

• जब चर्च सहमत हो जाये कि इस व्यक्ति में कोई लक्षण नहीं दिखाई दे रहे हैं कि उसको पछतावा होगा (अस्थाई नहीं),

तब चर्च को उसे निष्कासित करने की दिशा में कदम उठाना चाहिये।

• जब एक पाप का रूप विशाल हो, घृणास्पद हो, और दोहरी मानसिकता का परिचायक हो। ऐसे में वह पश्चाताप किये जाने

की विश्वसनीयता खो देगा, जब तक कि कुछ समय न बीत जाये और फिर से विश्वास न कमाया जाये, तब तक निर्वासन

देना उचित होगा, जिसके द्वारा पश्चाताप का परीक्षण भी हो जायेगा।

आत्मा की शुद्वता या दरिद्रता

अगर चर्च अनुशासन उचित कार्यवाही है तो जब कभी यीशु का प्रतिनिधि कहलाने वाला जन यीशु का प्रतिनिधित्व करने में असफल रहता है, तो क्या चर्चस को उससे नैतिक सिद्वता की मांग करना चाहिये?

कुछ बातों में, यह बिल्कुल वैसा मापदंड है जिसे यीशु स्पष्ट ढंग से ठहराते हैं। मत्ती 5 में वह कहते हैं कि एक मसीही जन की धार्मिकता सदूकी और फरीसी से बढ़कर होना आवश्यक है, अन्यथा वह परमेश्वर के राज्य में प्रवेश नहीं कर पायेगा (मत्ती 5:20)।

इस अध्याय के उत्तरार्ध में, वह बताते हैं कि एक मसीही जन को ठीक उसी तरह सिद्व होना चाहिये, जैसे उसके स्वर्गिक पिता सिद्व हैं (पद 48) चर्चस को यीशु की सिद्वता के स्तर तक पहुंचने के लिये वास्तव में प्रयत्नरत होना चाहिये! यीशु वास्तव में गहन रूप में यथार्थवादी और समझदार थे, इसलिये मत्ती 5 का आरंभ स्वर्गिक आनंद प्रदान करने वाले पदों से होता है

धन्य हैं वे, जो मन के दीन हैं, क्योंकि स्वर्ग का राज्य उन्हीं का है।

धन्य हैं वे, जो शोक करते हैं, क्योंकि वे शांति पाएंगे।

धन्य हैं वे, जो नम्र हैं, क्योंकि वे पृथ्वी के अधिकारी होंगे।

धन्य हैं वे जो धर्म के भूखे और प्यासे हैं, क्योंकि वे तृप्त किये जाएंगे।

धन्य हैं वे, जो दयावन्त हैं, क्योंकि उन पर दया की जाएगी।

धन्य हैं वे, जिन के मन शुद्ध हैं, क्योंकि वे परमेश्वर को देखेंगे।

धन्य हैं वे, जो मेल करवाने वाले हैं, क्योंकि वे परमेश्वर के पुत्र कहलाएंगे।

10 धन्य हैं वे, जो धर्म के कारण सताए जाते हैं, क्योंकि स्वर्ग का राज्य उन्हीं का है। (मत्ती 5:3–10)।

इस पृथ्वी पर कौन स्वर्गिक राज्य का प्रतिनिधित्व करता है? किसे परमेश्वर के दर्शन करने और परमेश्वर के पुत्र कहलाने का आमंत्रण मिला है? अर्थात, जो अपने स्वर्गिक पिता के समान दिखाई देते और वैसे कार्य करते हैं, जैसे पुत्र सामान्यतः करते हैं। स्वर्गिक पिता और स्वर्गिक पुत्र दोनों दयालू, शुद्व हृदय वाले और मेलमिलाप करने वाले हैं। स्वर्गिक पुत्र, निसंदेह धार्मिकता के कारण सताया गया। चर्चेस को भी, इसी प्रकार के पुत्रों की पुष्टि करना चाहिये, जिनमें ऐसे गुण दिखाई देते हैं।

पर इस पतित संसार में, परमेश्वर के पुत्र वे भी कहलाते हैं जो अपनी आत्मिक दरिद्रता को पहचानते हैं, जो अपने पापों के प्रति शोकित होते हैं, जो नम्रतापूर्वक अपनी मांगों से पीछे हट जाते हैं, जो धर्म के भूखे और प्यासे हैं, वे जानते हैं कि उनके भीतर ऐसी धार्मिकता की कमी है। इसलिये चर्चेस को आश्चर्य नहीं करना चाहिये, कि जब कभी यीशु का प्रतिनिधित्व करने वाले उसके सदस्य पाप में लिप्त पाये जाते हैं; इसके स्थान पर चर्चेस

को गहराई से इसमें रूचि लेना चाहिये कि उनके सदस्य पाप के प्रति कैसी प्रतिक्रिया देते हैं? क्या वे शोक मानते हैं? क्या वे धर्म के भूखे और प्यासे हैं?

दूसरे शब्दो मे, यीशु के सच्चे प्रतिनिधि दो बातों को प्रगट करेंगेः इतनी अशुद्वता के वातावरण में भी उनकी आत्मा में शुद्वता और दीनता बढ़ती जायेगी (2 कुरूंथियों 7:11 भी देखें)। चर्चेस, जो परमेश्वर के राज्य के संचालन के अभ्यास में लगे हुये हैं, उन्हें इन दोनों बातों को अवश्य देखना चाहिये।

मैने एक अपने पूर्व पास्टर से पूछा कि मैं अपने एक मित्र को कैसे समझाउं जो एक व्यभिचारी संबंध में अनिश्चितता भरे कदम उठा चुका है, पर यह बहुत अच्छी बात हुई, कि उसका वह संबंध बीच में ही खत्म हो गया। मेरे पास्टर ने मुझे सलाह दी थी कि, इसमें कोई आश्चर्य की बात नहीं थी कि यह व्यक्ति इस पाप की परीक्षा में गिरा। मुख्य प्रश्न यह है कि उसने तुम्हारी फटकार का कैसे प्रत्युत्तर दिया? ''सुधार के प्रति उसकी प्रतिक्रिया बतायेगी कि उसके हृदय में क्या है।''

अध्याय 4

एक चर्च किस प्रकार चर्च अनुशासन का अभ्यास करता है ?

चर्च की संस्कृति में औपचारिक स्तर पर सार्वजनिक अनुशासन अधिक अच्छा कार्य करता है जबकि अनौपचारिक व गुप्त अनुशासन का स्वागत किया जाता है और उसे व्यवहार में लाया जाता है। अगर आप अनुशासन की तलवार उनके सिर पर लटकाये रहेंगे जो एक दूसरे को थामे रखना अपना उत्तरदायित्व समझते हैं, तो आप उन्हें लड़ाई के लिये आमंत्रित कर रहे हैं। सुसमाचार एक दूसरे के प्रति जिम्मेदारी समझना सिखाता है, इसलिये अंततः इस जिम्मेदारी का निर्वाह, चर्च में संपूर्ण जीवन भर, गुप्त और सार्वजनिक स्तर पर करना चाहिये। परंतु जब लोग स्वयं को पाप के प्रति उत्तरदायी नहीं समझते हैं तो सार्वजनिक के बजाय गुप्त में उसकी जिम्मेदारी लेना निश्चित ही आसान लगता है। चर्च सदस्य के निजी जीवन में जो पहले से ही चल रहा है, उसकी सार्वजनिक जिम्मेदारी लेना एक अच्छा परिणाम कहलायेगा।

मेरे एक पास्टर मित्र हैं जो अपने साथी अगुओं को एक मामले में चर्च अनुशासन लागू करने के लिये समझा रहे थे। एक आदमी ने अपनी पत्नी को छोड़ दिया था। परन्तू प्राचीन इस बात के लिये अनिश्चित थे कि मंडली किसी को चर्च से बाहर कर देने के लिये तैयार होगी या नहीं, इसलिये वे अत्यंत धीमें धीमें कदम उठा रहे थे। अंत में प्राचीनों ने उस व्यक्ति को निर्वासित करने की अनुशंसा कर दी, तो मंडली की भी प्रतिक्रिया आयी, ''इस मामले में समय देना आवश्यक था। हम जानते हैं कि इन मामलों में कुछ किये जाने की गुंजाइश

होती है।'' दूसरे शब्दों में, प्राचीनों ने यह अच्छा कार्य किया कि चर्च के भीतर ही अनुशासन के लिये एक उपयुक्त वातावरण तैयार किया।

औपचारिक अनुशासन सार्थक सिद्व होता है जब चर्च के सदस्य पहले से ही जानते हैं कि कैसे प्रेमपूर्ण सुधार किया जाये और ग्रहण किया जाये। वे इसे अपने घरों में करते हैं। वे इसे भोजन के समय अमल में लाते हैं। वे इसे शिष्टतापूर्वक, सावधानी के साथ और सदैव दूसरों का हित सोचकर अमल में लाते हैं। वे सुधारवादी शब्दों को स्वार्थीपन के कारण नहीं कहते – कि उनके ''हृदय से कुछ भी बातें निकल कर आ रही हों।''

यहां पांच बिंदुओं का वर्णन है जो नये नियम पर आधारित हैं जो यह प्रदर्शित करते हैं कि चर्च अनुशासन का संचालन कैसे किया जाये।

इस प्रक्रिया में जितना संभव हो कम लोग सम्मिलित हों

एक स्पष्ट सिद्वांत जो मत्ती 18:15–20 से निकलता है, वह यह है कि पाप को सुधारने की प्रक्रिया में यीशु उस व्यक्ति को पश्चाताप तक लाने के लिये, कम से कम लोगों को सम्मिलित करना चाहता है। अगर एक के बाद एक व्यक्ति से बातचीत के द्वारा, पश्चाताप का कार्य होता है, तो यह अच्छी बात है। अगर बात दो या तीन से बन जाती है तो उस प्रक्रिया को अपनाइये। जब सारे रास्ते बंद हो गये हों, तो उस मुद्दे को चर्च के सामने ले जाना चाहिये।

मत्ती 18 की जो प्रक्रिया है, वह, बेशक, मानती है कि बहुत लोगों को उस पाप के बारे में नहीं पता होना चाहिये। वे पाप जो सार्वजनिक प्रकृति के हैं, जैसा 1 कुरूंथियों 5

में उल्लेखित है, उनके लिये चर्च अगुओं द्वारा संपूर्ण चर्च को आगाह किया जा सकता है। एक ऐसी ही स्थिति फिलिप्पियों 4 में निर्मित होती है, जब पौलुस, संपूर्ण चर्च के सामने यूओदिया और सुंतुखे को मिल जुलकर रहने के लिये कहता है (फिलिप्पियों 4:2–3)। यह माना जा सकता है, कि चर्च पहले से ही इस मनमुटाव के बारे में जानता था।

कभी कभी जब एक पाप को सार्वजनिक रूप से संबोधित किये जाने की आवश्यकता होती है, तो उसके परिणाम सार्वजनिक होते हैं, भले ही उस व्यक्ति ने गुप्त में पश्चाताप किया हो। उदाहरण के लिये, ऐसा हो सकता है, कि अगर एक महिला, बिना ब्याह के गर्भवती हो जाती है। अगर वह और उसका साथी (अगर चर्च सदस्य ही हो), सच्चाई से पश्चाताप करें, तो उन्हें औपचारिक अनुशासन के दायरे में नहीं लाना चाहिये। परंतु कोमलता के साथ इस मुद्दे को चर्च के साथ बांटा जा सकता है (1) ताकि उस जोड़े का उदाहरण देते हुये यौन संबंधों के उपर मसीहत के रूख को समझा सकें और (2) चर्च के अगुवे भी, उस जोड़े के पश्चाताप द्वारा मसीह के अनुग्रह की पुष्टी कर सकें। इस तरह वे लोगों को उस जोड़े और उनके बच्चे को स्वीकार करने के लिये तैयार भी करते हैं। चाहे आप इसे पसंद करें अथवा नहीं, परंतु इस मुद्दे पर कुछ नहीं बोलना, चर्च को यह शिक्षा देता है कि पाप कोई बड़ी बात नहीं है और ऐसी स्थिति में लोग अफवाह फैलाते और तरह तरह की बातें करते हैं। कुछ नहीं कहना, अविश्वास और विभाजन को पैदा करता है।

दो प्राथमिकतायें जो इस सिद्वांत के आसपास घूमती है कि अनुशासन को यथासंभव छोटा रखें ताकि एक पापी की पश्चाताप करने की इच्छा और यीशु का नाम बचाने की इच्छा बलवती हो।

चर्च अगुओं को प्रक्रिया का नेतृत्व करना चाहिये

पाप तो धोखेबाज और जटिल है। यह बिना कारण नहीं होता, इसीलिये, पौलुस लिखता है, ''भाइयों, अगर आप में से कोई मनुष्य अपराध में पकड़ा भी जाये तो तुम जो आत्मिक हो, नम्रता के साथ ऐसे को संभालो और अपनी भी चौकसी रखो कि तुम भी परीक्षा में न पड़ो'' (गलातियों 6:1)। पौलुस जानता था कि जो नयी भेंड़े हैं वे जल्द धोखा खा जाती हैं, लोग या तो पापी के साथ पाप में सम्मिलित होने के लिये प्रलोभन देते है या कम से कम पाप के पक्ष में रखे तर्को से फुसलाये जाते कि क्यों पाप स्वीकार्य होता है। इसलिये, पौलुस ''आत्मिकता'' के लिये विनती करता है कि उसके द्वारा लोगों को बचा सके।

पौलुस का ''आत्मिक'' कहने से तात्पर्य चर्च के प्राचीनों से नहीं है और न उसने यह बात ''चर्च के प्राचीनों'' से कही। पर वह यह सलाह जरूर देता है कि जब पापी जन को एक या दो लोगों के समझाने से कोई फक्र न पड़े, तब चर्च, वरिष्ठ और बुद्विमान एवं विश्वासी भाई बहिनों को सम्मिलित करके अच्छा करता है। सामान्य तौर पर यही माना जाता है, कि चर्च अनुशासन के मामले में चर्च सदस्यों से सलाह ली जाती है विशेषकर, जब प्रक्रिया और अधिक बड़े दायरे में जाती है। चर्च अगुओं को परमेश्वर ने संपूर्ण चर्च की निगरानी करने के लिये ठहराया है। मैं निश्चित ही इसकी अनुशंसा करूंगा कि कोई भी पाप जो चर्च के सामने रखा जाता है, उसे पहले चर्च के प्राचीनों के सामने रखना चाहिये।

प्रक्रिया की लंबाई इस पर निर्भर करती है कि लाक्षणिक अपश्चातापीपन को प्रमाणित करने के लिये कितना समय लगता है

अनुशासन को अमल में लाने में जो सर्वाधिक कठिन प्रश्न है कि अगले स्तर तक जाने में कितना समय लग सकता है? कभी कभी ऐसा भी होता है कि धर्मशास्त्र मत्ती 18 के अनुसार अनुशासन की प्रक्रिया में एक व्यक्ति को, चर्च से निकाले जाने के पहले, कम से कम तीन चेतावनी दिये जाने तक का समय लगता है। कभी कभी तो यह इतना शीघ्र बताया गया है जैसे 1 कुरूंथियों 5 में कहा गया है कि कुकर्मी को तुरंत निकाल दो। और तब तीतुस 3:10 में उल्लेख किया है, जो ऐसा लगता है कि यह इन दोनों पदों के बीच का पद है। यह निष्कासन के पूर्व दो चेतावनी दिये जाने के लिये कहता है।

जैसा हमने अध्याय 3 में देखा, मत्ती 18 और 1 कुरूंथियों 5 के अनुसार, संपूर्ण निष्कासन में दो अलग अलग स्तर बताये गये हैं। प्रथम जहां मत्ती 18 का अंत होता है वहां से कुरूंथियों 5 प्रारंभ होता है ताकि पाप या उसके तरीके के प्रति जो अपश्चातापीपन हो उसे दूर किया जा सके। जब चर्च यह सुनिश्चित कर ले कि व्यक्ति के लक्षण अपश्चातापी बने रहने के दिखाई दे रहे हैं, तब उसे निष्कासित कर देना चाहिये।

तब सैद्धांतिक नजरिये से, यह बताना आसान हो सकता है कि अनुशासन की प्रक्रिया कितनी लंबी चल सकती है : पर चर्च को यह निष्कर्ष निकालने में बहुत लंबा समय लग सकता है कि वह व्यक्ति अपश्चातापी ही बना रहेगा। चर्च सदस्य तो प्रमाण देखने के उपरांत तुरन्त ही निष्कर्ष पर पहुंच सकते हैं। पर चर्च अगुओं को प्रमाणों की सूक्ष्मता को जांचने में और उस व्यक्ति के साथ अनगिनत बार वार्ता में लगे रहने के बाद, किसी स्पष्ट

निर्णय पर पहुंचने और एकमत होने में महिनों लग सकते हैं। ''कितना लंबा समय'' लगेगा, सैद्धांतिक रूप से यह महत्वपूर्ण नहीं है; पर वास्तविक जीवन के दृष्टिकोण से यह महत्वपूर्ण है। हम लोगों के हृदय में नहीं झांक सकते और जब हमें किसी के जीवन के फलों को जांचने का मौका आता है तो हम उस उत्तरदायित्व की गंभीरता को देखते हुये ऐसे महत्वपूर्ण मसले पर सावधानीपूर्वक कदम उठाते हैं। ताकि चर्च से निरंतर यह गवाही प्रगट हो कि कोई जन परमेश्वर के राज्य का वारिस है।

यह विडंबना है कि मध्यम प्रकार के पाप के भार के लिये लोग, पश्चाताप की गंभीरता को नहीं देखते, और यह प्रक्रिया काफी मंद चलती है। उदाहरण के लिये, किसी बात की लत लग जाना। यह तुरंत ही उस व्यक्ति के विश्वास को भी कलंकित नहीं करता। परंतु यह एक प्रश्नचिंन्ह खड़ा करता है और चर्च को इस स्थिति में रखता है कि उसे अपनी अनुशासन की कार्यविधि को धीमे कर देना चाहिये ताकि पश्चाताप को जांचने का कार्य सावधानीपूर्वक किया जायेगी। यह यीशु द्वारा मत्ती 18 में दिया गया एक और सबक है, जो हम अनुशासन के इस केंद्रत्यागी अभियान से सीख सकते हैं। जब कभी उसमें जितने लोग सम्मिलित होते हैं, पापी का सामना एक बार फिर इस प्रश्न से होता है, ''क्या आप सचमुच में इस पाप में लिप्त ही रहोगे?''

मनुष्य कभी कभी स्वयं को इस विश्वास में रखकर मूर्ख बना सकता है कि वह यीशु और अपने पसंदीदा पाप, दोनों के साथ रह सकता है। पर इसमें चर्च अगुओं के साथ वार्ता के तीव्र दौर के दौरान वह यह महसूस करने लगता है, ''अब मैं और पाप नहीं कर सकता। यह तो पाप के ही रूप हैं।''

मत्ती 18 में यीशु ने चर्च अनुशासन के लिये जो निर्देश दिये हैं, वे हमारी यह निर्णय करने में सहायता करते है कि व्यक्ति में पश्चाताप के लक्षण दिखाई दे रहे हैं: क्या व्यक्ति पाप को दोहराने के स्थान पर अपने हाथ को काट देगा या आंख को निकाल देगा (मत्ती 18:8–9)? क्या यह कहा जाये कि वह अपने पाप के विरूद्व संघर्षरत रहने के लिये इच्छा रखते हैं?

जो पश्चातापी लोग हैं, वे विशेषतया, अपने पाप को छोड़ देने के लिये लगनशील रहते हैं। परमेश्वर का आत्मा उनके भीतर इस कार्य को संपन्न करता है। जब ऐसा होता है, तब वे लोग बाहर की मंत्रणा भी स्वीकार करने लगते हैं। उनके तय समय में हुई असुविधा को स्वीकारने की इच्छा रखते हैं। शर्मनाक बातों को स्वीकारने की इच्छा रखते हैं। आर्थिक त्याग करने या मित्र खोने या संबंध समाप्त करने की भी इच्छा रखते हैं।

दूसरी और, पाप जितना वृहद या घोर पाप होगा, उसमें पश्चाताप का पलड़ा भारी रहेगा।[2] यह बहुत शीघ्रता से एक व्यक्ति के विश्वास को लज्जित करता है और चर्च को जल्द कार्यवाही करने के लिये बाध्य करता है। उदाहरण के लिये, किसी आदतन व्यभिचारी और शराबी के मध्य अंतर देखा जा सकता है। व्यक्ति के विश्वास को दोनों ही प्रकार के पाप धक्का पहुंचायेंगे। परंतु मैं यह कहने का साहस करता हूं कि पहले वाला पाप दूसरे पाप की अपेक्षा जल्द धक्का पहुंचायेगा।

विशेषतया ऐसा होता है कि बड़े पाप के साथ किसी न किसी रूप मे खतरे जुड़े हुये होते हैं, जिससे पूरी स्थिति में अविलंब निर्णय लेने की आवश्यकता होती है। सार्वजनिक रूप से बदनामी होने का खतरा पैदा होता है जिससे मसीह की प्रतिष्ठा को धक्का पहुंच सकता है

(1 कुरूंथियों 5) । चर्च में विभाजन होने का खतरा पैदा होता है जो चर्च को नुकसान पहुंचाता है (तीतुस 3:10) । गलत शिक्षा देने का खतरा उत्पन्न होता है और फिर से कलीसिया को ही हानि पहुंचती है, विशेषकर, दुर्बल भेड़ों को (देखिये 1 तीमु. 1:20; 2 यूहन्ना 10–11) । केवल खतरों के पैदा होने के कारण चर्च से निर्वासित करने का कदम नहीं उठाना चाहिये परंतु इन खतरों की उपस्थिति पाप की गंभीरता को बताती है और गवाही देती है कि क्यों चर्च को संबंधित जन के विश्वास की पुष्टि नहीं करना चाहिये। कहने का तात्पर्य यह है कि खतरे को (अर्थात मसीह की प्रतिष्ठा को धक्का पहुंचना; विभाजन या झूठी शिक्षा का खतरा; अन्य भेड़ों को नुकसान) अनुशासन के आधार पर नहीं देखना चाहिये, पर यह एक उचित दिशा में अनुशासन की कार्यवाही का समर्थन करने वाली गवाही होती है, जो कार्यवाही को तेजी से किये जाने को दृढ़ता प्रदान करती है। इसलिये कलीसिया के भीतर इस बात के महत्व को भी बढ़ावा देना चाहिये कि आवश्यक सभायें बुलायी जायें और सक्रियता से कार्यवाही की जाये।

संक्षिप्त में, प्रक्रिया की अवधि इस बात पर निर्भर करती है कि जो व्यक्ति इसमें सम्मिलित है उसमें कितने समय के अंतराल में पश्चाताप करने के लक्षण उत्पन्न होते हैं या वह अपश्चातापी ही बना रहता है। चर्च को एक और, उन परिस्थितियों की जांच करनी चाहिये जिनमें पाप घटित हुआ, तो दूसरी और, पश्चाताप के प्रमाणों को भी देखना चाहिये। कभी कभी, कुछ नयी जानकारी भी सामने आती है जो जांच को किसी भी दिशा में घूमा सकती है। पर जब चर्च सहमत हो जाता है कि उसके पास दोनों तरफ की उचित सूचनायें उपलब्ध है और अब स्थिति निर्णय लेने की है तो तराजू का पलड़ा जिस तरफ भारी होता है,

उसी दिशा में कार्यवाही की जाना आवश्यक होती है। ये प्रक्रिया या तो एक मिनिट में संपन्न हो जाये या एक साल भी लग सकता है।

व्यक्ति को संदेह का लाभ मिलना चाहिये

जैसा कि हमने पहले ही परीक्षण किया है, कि यीशु मत्ती 18 में एक सावधानीपूर्वक न्यायिक प्रक्रिया के अंतर्गत कुछ निधारित करते हैं: ''हर एक बात दो या तीन गवाहों के मुंह से ठहराई जाये'' (पद 16) । इसलिये आरोपों का तय होना आवश्यक है। प्रमाण प्रस्तुत करना जरूरी हैं। गवाही जरूरी है। इसका यह तात्पर्य है कि चर्चेस को अनुशासन वाले मामलों में कोर्ट के समान सिद्वांत लागू करना चाहिये ''जब तक दोषी सिद्व न हो तब तक व्यक्ति बेगुनाह है।'' यह सिद्वांत न केवल औपचारिक अनुशासन पर लागू किया जा सकता है, पर यह इस बात को भी प्रभावित करता है कि कैसे एक मसीही जन को दूसरे मसीही भाई या बहिन के साथ गुप्त में अनुशासनात्मक कार्यवाही करना चाहिये। लोगों को संदेह का लाभ दिया जाना आवश्यक है। दोष लगाने के पूर्व प्रश्न पूछे जाना चाहिये। कोई निर्णय घोषित किये जाने के पूर्व उस बात की स्पष्टता सिद्व होना अवश्य है।

अनुशासन के क्षेत्र में और जीवन के हर क्षेत्र में भी जैसे यह लागू होता है, इस पद से शिक्षा लेना चाहिये कि ''हर व्यक्ति सुनने में तत्पर, बोलने में धीर और क्रोध में धीमा हो'' (याकूब 1:19) ।

अगुओं को सम्मिलित होना चाहिये और कलीसिया को निर्देश देना चाहिये

हर डिनोमीनेशन में औपचारिक अनुशासन की परंपरा में संपूर्ण कलीसिया को सम्मिलित करने के अलग तरीके होते हैं। मैं व्यक्तिगत रूप से बाइबल सिद्वांत के अनुसार कलीसिया को सम्मिलित करने की अनुशंसा करूंगा। यह तरीका मत्ती 18 (जहां यीशु संपूर्ण "चर्च" को शामिल करते हैं) और 1 कुरूंथियों 5 (जहां पौलुस समस्त कलीसिया को जिम्मेदारी लेने के लिये निर्देशित करता है) पर आधारित है। पर उनके लिये जो धर्मशास्त्रिय आधार पर व्याख्या किये जाने की आवश्यकता से असहमत हैं, मैं फिर भी, अनुशंसा करूंगा कि पूरी कलीसिया को धर्मविज्ञान और पास्टरीय आदेश के आधार पर सम्मिलित किया जाये। धर्मविज्ञान के आधार पर, पौलुस कलीसिया के प्रत्येक समूह से इस मुद्दे पर विचार विमर्श करने के लिये कहता है और आपस में एक दूसरे के अनुभव को बांटने की सलाह देता है, भले ही कलीसिया का वह समूह आनंद या शोक की अवस्था में समय बिता रहा हो (1 कुरूंथियों 12:21–26; देखिये इफि. 4:16) । चर्च अनुशासन विशेषकर, जब अपने अंतिम चरणों में पहुंचता है, तब हर समूह के लिये यह एक गहन महत्वपूर्ण घटना होती है और मसीह में हमारे संयुक्त होने के गुण के कारण, हर भाग निश्चित ही अपनी भूमिका निभाता है। पास्टरीय दृष्टिकोण से, यह एक महत्वपूर्ण घटनाक्रम है जिसका अनुभव प्रत्येक समूह द्वारा लिया जाना चाहिये। इससे समस्त समूहों को शिक्षा मिलेगी। सबको चेतावनी व चुनौती मिलेगी। सबके पास कुछ न कुछ बांटने को होगा।

कलीसियाई व्यवस्था में, चर्च को अपना मत देने के लिये कहा जायेगा (किसी संदर्भ में) या निर्वासन के अंतिम चरण में सर्वसम्मत होने के लिये कहा जायेगा (किसी दूसरे

संदर्भ में), यह ऐसी गतिविधि है जो धर्मशास्त्रिय दृष्टांत पर आधारित है। ध्यान दीजिये 2 कुरूंथियों 2:6 में ''बहुतों'' शब्द का प्रयोग किया गया है।

दूसरी व्यवस्था में, एक सदस्य को चर्च से निष्कासन के अंतिम निर्णय में, कलीसिया को सम्मिलित होने के लिये नहीं पूछा जाता है, किंतु हर व्यवस्था के चर्च अगुओं को (मैं ऐसा मानता हूं) चार प्रकार से कलीसिया को सम्मिलित करना चाहिये। पहला, चर्च अगुओं को, किसी सदस्य को निष्कासित करने से पहले संपूर्ण ''चर्च को बताना चाहिये'' (मत्ती 18:17)। यह मानते हुये कि किसी सदस्य को एकाएक चर्च से निकाले जाने की जरूरत नहीं है, यीशु दूरदर्शिता से समय दिये जाने की सलाह देते हुये प्रतीत होते हैं, वह समय जो चर्च को सूचित किये जाने और वास्तव में निष्कासित किये जाने के बीच का हो: ''कलीसिया से कह दें और अगर वह कलीसिया की भी न सुने..... के जैसा जान''। अनुमानत:, यह कदम चर्च सदस्यों को अवसर देता है जिनकी उस अपश्चातापी जन के साथ पहले से ही संबंद्वता है कि उसे पश्चाताप करने के लिये समझायें। इसके साथ ही, यह कलीसिया को जब निष्कासन की अंतिम कार्यवाही होनी है, उसके लिये भी तैयार करता है। अंतिम निर्णय सुनाये जाने के पहले, यह उन्हें कुछ करने या प्रश्न पूछने का अवसर देता है।

दूसरा, चर्च अगुओं को चर्च को उस सदस्य के निष्कासन के बारे में जानकारी देना चाहिये (अगर उन्होंने चर्च को निर्णय लेने में शामिल नहीं किया है, मेरे विचार से करना चाहिये) । चर्च को इस निर्णय के बारे में सूचित किया जाना चाहिये अगर (चर्च शामिल नहीं) है। धर्मशास्त्र मसीहीयों को बताता है कि उनके संबंध भी, उस निष्कासित जन के प्रति, जैसा

अगले बिंदु में बताया गया है) स्पष्टतया बदल जाने चाहिये; इसलिये, विश्वासियों को एक सदस्य के निष्कासन के बारे में बताना चाहिये।

तीसरा, चर्च अगुओं को कलीसिया को निर्देश देना व मार्ग दर्शन देना चाहिये कि कैसे संभावित या वास्तविक रूप में निर्वासन की प्रक्रिया को देखें। अपरिपक्व मसीही जन अक्सर, भोलेपन में गलत स्थानों पर सहानुभूति रखने लग जाते हैं (जैसे परमेश्वर ने कभी कभी इजरायल के लोगों से कहा था) । अगुओं को उन्हें बाइबल के उपयुक्त पद लेकर समझाना चाहिये और एक मार्मिक व तरस पूर्ण करूणा का नमूना सामने रखकर, ठोकर खाने से बचाना चाहिये।

इसी संदर्भ में, अगुओं को चर्च सदस्यों को यह निर्देश भी देना चाहिये कि निष्कासित जन के साथ कैसा व्यवहार करें। नये नियम में कई स्थान पर इस मुद्दे को संबोधित किया गया है (1 कुरूंथियों 5:9, 11; 2 थिस्सु. 3:6, 14–15; 2 तिमोथी 3:5; तीतुस 3:10; 2 यूहन्ना 10)। मेरे स्वयं के चर्च के अगुवें, मुख्य रूप से जो सलाह देते हैं कि अनुशासित किये गये व्यक्ति के प्रति व्यवहार में अंतर अवश्य आ जाना चाहिये। उसके साथ परस्पर बातचीत होने पर उसके प्रति अरूचि दिखाने के बजाय, पश्चाताप के विषय पर संक्षिप्त बातचीत करना चाहिये। लेकिन उसके परिवार के सदस्यों को उसके प्रति अपने पारिवारिक कर्त्तव्यों का निर्वाह करते रहना चाहिये (इफि. 6:1–3; 1 तिमोथि. 5:8; 1 पतरस 3:1–2)

चौथा, अगुओं को कलीसिया का नेतृत्व प्रार्थना की ओर ले जाने के लिये, पश्चाताप के प्रति आशावान बने रहने, और पापी को स्वीकार करने और उसके साथ

मेलमिलाप करने की दिशा में करना चाहिये। ऐसा नेतृत्व सावधानीपूर्वक दिये गये निर्देश और व्यक्तिगत उदाहरण से होता है। किसी के भी मन में कोई संदेह नहीं होना चाहिये कि अगुवें और चर्च दोनों उस व्यक्ति के अलग किये जाने से दुखी हैं और उस सदस्य से केवल मेलमिलाप किये जाने के इच्छुक हैं।

एक चर्च की पहल

पाठकों ने यह ध्यान दिया होगा कि मैंने चर्च अनुशासन की स्थिति को हल करने के लिये कोई व्यवस्थित रूपरेखा नहीं दी। बाइबल औपचारिक अनुशासन लागू करने के लिये कई मार्ग बतलाती है। इसका कारण है कि अलग अलग चर्च की व्यवस्था, अलग अलग मापदंड निर्धारित करेगी। इसमें चर्च अगुवों को बुद्विमानीपूर्वक यह देखना होगा कि बाइबल के कौन से सिद्वांत उपयुक्त बैठते और लागू किये जाने योग्य है।

किंतु मैं समझा सकता हूं कि मेरे अपने चर्च में कैसे यह प्रक्रिया कार्य करती है। विस्तारपूर्वक कहें तो हम मत्ती 18 में बताया गया तरीका प्रयोग में लाते हैं। वैयक्तिक तौर पर यह सिखाया गया है कि ऐसे मुद्दों को गुप्त में संबोधित करें। अगर गुप्त में पश्चाताप करना प्रगट नहीं होता है तो किसी प्राचीन या प्राचीनों को सम्मिलित किया जाये, पहले व्यक्तिगत रूप से बात प्रारंभ करें फिर पूरे समूह के सामने बात रखी जाये। कभी कभी जो दोषी जन है वह अगुवों के समूह से मिल सकता है, यद्यपि व्यक्ति ऐसा करने के लिये अनिच्छुक भी हो सकता हैं। तब अगुवे कुछ दिन मंत्रणा में बिता सकते हैं, इसमें उन्हें कुछ महिने भी लग सकते हैं कि क्या इस मुद्दे को कलीसिया के सामने लाया जाये। अगर वे कलीसिया को सूचित करने की सोचते हैं तो वे उचित सूचना केवल सदस्यों की व्यक्तिगत

सभा में ही प्रस्तुत करेंगे। वे उस व्यक्ति का नाम लेंगे और उसके पाप की श्रेणी बिना विस्तार में जाये, नियत करेंगे। अगुवे किसी अतिरिक्त मुद्दे को समझायेंगे जो व्यक्ति को पश्चाताप के लिये प्रेरित करेंगे, और वे कलीसिया से आग्रह करेंगे कि प्रार्थनापूर्वक उस सदस्य को पश्चाताप के लिये मनाये। वे यह भी समझायेंगे कि अगर इस स्थिति में बदलाव नहीं आता है तो अगुवे, सदस्यों की अगली सभा जो अगले दो महिने के बाद होगी, उस सभा में निर्वासित किये जाने का कदम उठायेंगे। तब अगुवे, सदस्यों से प्रश्न पूछेंगे, क्या सदस्यों की अगली सभा होनी चाहिये, क्या अगुवे उस सदस्य को बाहर करने के लिये दृढ़ रहें और उसके निष्कासन की अनुशंसा करें। वे सदस्यों से जान सकते हैं कि क्या उनके पास कोई प्रश्न हैं और वे सदस्यों से मत भी ले सकते हैं। अगर सदस्य उस व्यक्ति को निकाले जाने के पक्ष में मत देते हैं तब अगुवे कलीसिया को निर्देश देंगे कि अब उस पूर्व सदस्य के साथ कैसा व्यवहार करें।

यह प्रक्रिया बिल्कुल इसी रीति से होनी चाहिये, इसके लिये हमें हमेशा निम्नलिखित सिद्वांतों पर अमल करना चाहिये :

1) प्रक्रिया में जितना संभव हो कम से कम सदस्य हो ताकि व्यक्ति को पश्चाताप के लिये प्रेरित किया जा सके।

2) जब प्रक्रिया एक या अधिक व्यक्तियों के मध्य चल रही हो, तो चर्च के अगुओं को प्रक्रिया का नेतृत्व करना चाहिये।

3) प्रक्रिया में लगने वाला समय इस बात पर निर्भर करता है कि संबंधित जन पश्चातापी है या नहीं और यह तय करने में जितना

समय लगेगा उतनी प्रक्रिया लंबी होगी।

4) जब तक प्रमाण सिद्व नहीं हो तब तक व्यक्ति को संदेह का लाभ मिलना चाहिये।

5) अगुवों द्वारा कलीसिया को सम्मिलित किया जाना चाहिये और जैसा उपयुक्त हो, निर्देश दिये जाने चाहिये।

अध्याय 5

पुनःस्थापन का कार्य कैसे होता है?

अगर औपचारिक अनुशासन में चर्च सदस्यता से निष्कासन और प्रभु भोज से वंचित किये जाना सम्मिलित है, तो पुनःस्थापन से क्या तात्पर्य है? यह कब होता है? हमें उन दो प्रश्नों पर विचार करना चाहियेः क्या और कब?

पुनःस्थापन क्या है?

जब एक व्यक्ति चर्च से निकाला जाता है तो उसके पुनःस्थापन में चर्च सामान्य तौर पर उसे क्षमा कर देता है और परमेश्वर के राज्य में पुनः उसकी नागरिकता की पुष्टि करता है।

कुरूंथियों को लिखे पौलुस की दुसरी पत्री में, वह एक अन्य चर्च अनुशासन के मामले का उल्लेख करता है। इसमें वह पुनःस्थापन का वर्णन करता है। यहां पाप का विवरण नहीं दिया गया है, परंतु पुनःस्थापन को इस तरह से समझाया गया है :

ऐसे जन के लिये यह दंड जो भाइयों में से बहुतों ने दिया, बहुत है। इसलिये इस से भला है कि उसका अपराध क्षमा करो; और शांति दो, न हो कि ऐसा मनुष्य उदासी में डूबा जाए। इस कारण मैं तुम से बिनती करता हूं कि उस को अपने प्रेम का प्रमाण दो। (2 कुरूंथियों 2:6–8)

कलीसिया में से बहुत से लोगों ने कार्यवाही में हिस्सा लिया (मत दिया)। अब पौलुस उनसे उस व्यक्ति को क्षमा करने को कह रहा है, उसे शांति देने, उसके प्रति प्रेम का प्रमाण देने के लिये कह रहा है।

व्यक्ति को क्षमा करने का जो आग्रह पौलुस द्वारा किया गया है वह यीशु द्वारा यूहन्ना के सुसमाचार में कहे गये शब्दों की याद दिलाते हैं, और मत्ती के सुसमाचार में भी मुख्य रूप से दिये हुये हैं: "जिन के पाप तुम क्षमा करो वे उन के लिये क्षमा किए गए हैं, जिन के तुम रखो, वे रखे गए हैं" (यूहन्ना 20:23)। इस कथन के कहने के बाद ही यीशु ने पतरस को पुनःस्थापित कर दिया (यूहन्ना 21:15–17)।

एक बार चर्च किसी पश्चातापी व्यक्ति को पुनः सहभागिता व प्रभु भोज में शामिल करता है तब उसे परख अवधि पर रखने या दूसरे दर्जे की नागरिकता दिये जाने का कोई प्रश्न ही नहीं उठता है। बल्कि चर्च द्वारा उसके प्रति सार्वजनिक तौर पर क्षमा घोषित की जाना चाहिये (यूहन्ना 20:23), उसके प्रति अपने प्रेम का प्रमाण देना चाहिये (2 कुरू 2:8), और उत्सव मनाना चाहिये जैसे उड़ाउ पुत्र की वापसी पर उसके पिता ने बनाया था (लूका 15:24) ।

मेरे स्वयं के चर्च ने एक बार एक व्यक्ति को एक जटिल परिस्थिति के कारण चर्च से निर्वासित कर दिया था जिसमें गहन रूप से उसकी बेईमानी और अपश्चातापी रूख सम्मिलित था। पर यह धन्यवाद का विषय है, कि उसने बाद में पश्चाताप किया और चर्च उसे क्षमा देने में सक्षम हुआ और उसकी सहभागिता को भी पक्का किया। चर्च के अगुओं ने इस तरह कार्यवाही की :

कार्यवाही : अगुवें प्रसन्नता के साथ अनुशंसा करते हैं कि समस्त सदस्य परमेश्वर पिता को हमारे भाई के द्वारा पश्चाताप किये जाने के लिये धन्यवाद देते हैं, हम औपचारिक रूप में उसके कृत्यों के प्रति क्षमा प्रदान करते हैं। हम सार्वजनिक तौर पर उसके साथ हमारी सहभागिता के भाव को और मसीह में हमारे भाई के प्रति हमारे प्रेम को फिर से नया बनाते हैं। हम सब मिलकर परमेश्वर पिता को उनके वचन की विश्वसनीयता के लिये धन्यवाद देते हैं और जो लोग अपनी आज्ञाकारिता के द्वारा वचन का सम्मान करते हैं उनको धन्यवाद देते हैं।

चर्च संयुक्त रूप से इसकी पुष्टि करता है। यह आनंद मनाने का अवसर था। क्या पुनःस्थापन का अर्थ आवश्यक रूप में एक बार फिर चर्च की सदस्यता प्रदान किया जाना है? अधिकतर परिस्थितियों में, मै कहूंगा कि "हां।" पुनःस्थापन के लिये जो पश्चाताप आवश्यक है, दूसरी बातों के साथ, उसका भी उल्लेख किया जायेगा ताकि चर्च के साथ पुनः संयुक्त होने की इच्छा रखते हुये और उसकी देखरेख में स्वयं को समर्पित किया जा सके। पर अंतः मैं मानता हूं कि पुनःस्थापन बपतिस्मे के समान है। बपतिस्मा चर्च सदस्यता में आवश्यक रूप से सम्मिलित हो, यह जरूरी नहीं है (प्रेरितों के कार्य 8:38–39 में इथोपिया के खोजे के बारे में सोचें)। पुनःस्थापन का अर्थ साधारण रूप में समझा जा सकता है, पर यह आवश्यक तौर पर चर्च सदस्यता के साथ जुड़ा हुआ नहीं होता है। मेरे उदाहरण में वह व्यक्ति किसी दूसरे देश में रह रहा था तब चर्च ने उसके विरूद्व कार्यवाही में मत डाला। उसने चर्च को ईमेल किया, अपने पाप को स्वीकार किया और कैसे वह अपने संबंधों को फिर से पुनःस्थापित कर सकता है, इसके लिये पूछा। उसके साथ कई बार बातचीत के आदान प्रदान के बाद इस कार्यवाही के द्वारा मामले के निष्कर्ष पर पहुंचा जा सका।

पुनःस्थापन कब होना चाहिये?

चर्च में पुनःस्थापन कब होना चाहिये? इसका साधारण सा उत्तर है, जब पापी पश्चाताप करे और चर्च इस बात पर सहमति प्रदान कर दे कि उस के द्वारा किया गया पश्चाताप सच्चा है, क्योंकि पश्चाताप करने के परिणाम चर्च सदस्य उस व्यक्ति के जीवन में देख सकते हैं। पुनःस्थापन तब होता है जब चर्च एक बार फिर राष्ट्रों के समक्ष खड़े होने का इच्छुक हो और उस व्यक्ति के विश्वास के प्रति अपना समर्थन दे सकता हैं।

कभी कभी पश्चाताप के परिणाम बहुत स्पष्ट होते हैंः एक व्यक्ति जो अपनी पत्नी को छोड़ चुका हो, वह वापस लौटता है। कभी कभी प्रमाण धुंधले होते हैंः एक व्यक्ति जो व्यसन के दुष्चक्र में फंस चुका होता है, वह पूर्ण रूप से उससे बाहर नहीं निकल पाता है, पर पहले से उसके हालात में थोड़ा फक्र होता है और उसके भीतर नयी ताकत का संचार होता है कि वह इससे लड़ सके।

पश्चाताप के लिये जो आवश्यक प्रमाण है, वह हर पाप के लिये भिन्न दिखाई देंगे और हर बार यह जांचना कि पश्चाताप सच्चा है कि नहीं यह आसान नहीं होगा। मेरे अपने चर्च के अगुवों ने एक बार इस द्वंद का सामना किया था। एक व्यक्ति जिसको चर्च ने अनुशासित किया था, उसमें पश्चाताप के कुछ चिंन्ह दिख रहे थे, किंतु उसके द्वारा ऐसे चिंन्ह भी व्यक्त किये गये कि ऐसा प्रतीत हो रहा था कि उसका हृदय अभी भी कड़ा है। जब अगुवों ने विचार विमर्श के द्वारा उस व्यक्ति को पुनः चर्च में लेने की अनुशंसा करने का सोचा, तो हम सभी जन उस व्यक्ति से संबंधित दोनों पक्ष देख पाये। हम सभी को पौलुस के उन शब्दों का भार महसूस हुआ कि ऐसे व्यक्ति को अत्यधिक दुख से विह्वल न होने दो। अंत में सबने मत

दिया, सात मत उसे चर्च में नहीं लेने के लिये डाले गये और छः लोगों ने उसे चर्च में पुनः लेने के पक्ष में अपना मत दिया।

यह संभव है, इसमें कोई संदेह नहीं, कि हमने चर्च के अगुवे होने के नाते भूल की, बिलकुल वैसे ही जैसे एक मनुष्य या एक कलीसिया जो हर निर्णय में भूल कर सकते है। बहुमत और अल्पमत वाले दोनों सदस्यों ने यह माना कि परमेश्वर हमारे दोषयुक्त होने और विचारों में भेद होने के द्वारा भी कार्य करता है। परमेश्वर का धन्यवाद हो, परमेश्वर हमारी अस्थाई कही जाने वाली अगुवों की समिति और त्रुटिपूर्ण कार्यवाही के द्वारा भी कार्य करता है।

पश्चाताप के प्रमाण की जांच करने के लिये विवेकपूर्ण तरीके से स्थिति को नियंत्रित करते हुये, करूणा पूर्वक प्रक्रिया संपन्न करनी होगी। इसका यह अर्थ होगा कि प्रक्रिया को धीमें चलना आवश्यक है, पर बहुत धीमी भी नहीं चलनी चाहिये। अध्याय 3 में मैंने मेरे एक मित्र की कहानी को बताया है जो उसके चर्च से किसी शर्मनाक अपराधिक गतिविधि के कारण निकाला गया था। परमेश्वर का धन्यवाद हो कि उसने उस अपराधिक गतिविधि को त्याग दिया इस तरह यह एक अच्छा संकेत था। परंतु उससे जुड़े दूसरे पापों ने बुरा संकेत दिया। वह दर्जनों बार अपने चर्च के दो अगुवों से, किसी अच्छे चिंन्ह के विषय में सलाह लेने के लिये तैयार था। परंतु चर्च में उसकी उपस्थिति नाम मात्र थी और सलाह के लिये भी आना नहीं के बराबर था। यह एक अच्छा संकेत नहीं था। इस लेखन के समय, चर्च के पास्टर्स सर्तकता के साथ करूणापूर्वक चलते हुये, नियंत्रण रखते हुये, धीरे धीरे अपना कार्य कर रहे हैं परंतु इस कार्य की गति बहुत धीमें भी नहीं है।

इस चर्च के वरिष्ठ पास्टर ने अभी हाल में मुझे लिखा, "हमें आशा है कि प्रभु उस व्यक्ति को अभी भी पुनःस्थापित करेंगे! हमने सोचा था कि इसमें अधिक समय न लगे, जिससे कि वह व्यक्ति और अधिक रूष्ट न हो जाये। परंतु हमने जितना तेजी से चलना चाहा, हम नहीं चल पाये। कृपया, उसके लिये प्रार्थना कीजिये कि वह प्रभु को कर्मठतापूर्वक खोजे।"

जैसा मैंने पहले भी कहा था, कि कुछ ऐसे समयों के लिये एक नियम पुस्तिका होनी चाहियेः "जब कभी यह स्थिति आये तो ऐसा किया करो।" परंतु ऐसा लगता है कि प्रभु चाहते हैं कि चर्च इस बात को सीखे कि अत्यधिक द्वंद्व के समय में प्रभु द्वारा प्रदत्त विवेक पर विश्वास करने से हमें एक बार फिर यह स्मरण होता है कि हम उस पर कितने निर्भर हैं।

क्या दूसरी कलीसियाएं इस निर्णय से बंधे हैं?

एक अंतिम प्रश्न है जिस पर अनुशासन व पुनःस्थापन की बात करते समय, विचार करना महत्वपूर्ण होगा। क्या अन्य चर्चेस, पहले वाले चर्च द्वारा व्यक्ति को निर्वासित किये जाने वाले निर्णय से बंधे हुये हैं? इसका अर्थ है कि क्या एक चर्च उस सदस्य को ग्रहण कर सकता है, जिसके विरूद्व दूसरे चर्च ने अनुशासनात्मक कार्यवाही की है?

अलग अलग मसीही सम्प्रदायों की परंपरा भिन्न तरीकों से इसका उत्तर देती है। कुछ परंपरायें, किसी हद तक, इस धारणा पर आधारित होती है कि संस्थागत चर्च, स्थानीय चर्चेस से इन मामलों में निश्चित रूप से आगे होते हैं ताकि ऐसी बातें न हों। एक बिशप के द्वारा की गई कार्यवाही, कुछ हद तक, दूसरे बिशप द्वारा बाध्य मानी जानी चाहिये।

पर यह केवल रोमन कैथोलिक और एंग्लीकंस के लिये ही लागू नहीं होता है। कुछ प्राचीन बैपटिस्ट ने यह तक़्र किया था कि जब एक चर्च किसी व्यक्ति को निर्वासित करता है, तो वह निर्वासित जन उस चर्च के अधिकार क्षेत्र में माना जाता है, जब तक उस पर से प्रतिबंध न हटा लिया जाये। इस बीच में, किसी दूसरे बैपटिस्ट चर्च को उस व्यक्ति को अपने यहां सदस्यता देकर, पहले वाले चर्च के अधिकार क्षेत्र में दखलंदाजी नहीं करनी चाहिये।

मेरे अनुमान से, इस तक़्र को गलत समझा गया है। चर्चेस को किसी एक चर्च द्वारा अनुशासित किये हुये व्यक्ति को अपने यहां सदस्य ग्रहण करने का अधिकार है। ऐसा करने में बुद्धिमानी तो नहीं होगी। परंतु वे निश्चित ही तब बुद्धिमान कहलायेंगे जब वे पहले चर्च की कार्यवाही की जांच–पडताल कर सकें। परंतु अंतिम विश्लेषण में, जैसे यीशु ने प्रत्येक कलीसिया को बांधने और खोलने की चाबी दी है, एक कलीसिया के निर्णय दूसरी कलीसिया को बांध नहीं सकते।

जब एक चर्च किसी को निर्वासित करता है, वह उसे शैतान को सौंपता है (1 कुरूं 5:5)। इसका अर्थ है कि वह अब यह पुष्टि नहीं करता कि यह व्यक्ति परमेश्वर के राज्य का है, जहां परमेश्वर का छुटकारा देने वाला प्रभुत्व कार्य करता है। निर्वासित करना, इस बात की घोषणा करता है कि यह व्यक्ति शैतान के राज्य का होना चाहिये, जहां शैतान का अधिकार है (मत्ती 4:8–9; यूहन्ना 12:31; 14:30)। इस निर्वासित जन के उपर अब चर्च का कोई अधिकार नहीं रहा, अब यह गैर मसीही जन जो शैतान के क्षेत्र से आते हैं, उनके समान माना जायेगा। इसलिये, यीशु कहते हैं कि तुम ऐसे जन को "मूर्तिपूजक या महसूल लेने वाले

के समान समझो'' (मत्ती 18:17) – एक ऐसा मनुष्य जो परमेश्वर के वाचायुक्त समाज का नहीं हैं।[3]

तो क्या मैं चर्च को एक दूसरे से अलग होकर स्वतंत्र कार्य करने वाला कह रहा हूं? बिल्कुल भी नहीं। नये नियम में उल्लेखित चर्च स्पष्ट तौर पर एक दूसरे से संबंधित थे। वे यह देखते थे कि कैसे वे संतृप्त रहते थे, भली और उचित शिक्षा पाते थे और सत्य के लिये मिलकर कार्य करते थे (देखिये प्रेरितों के कार्य 11:28–30; कुलुस्सियों 4:16; 3 यूहन्ना 5–8)। वे एक दूसरे को झूठी शिक्षा के प्रति भी आगाह करते और घृणित व्यक्तियों के प्रति भी सतक्र करते थे (1 यूहन्ना 4:1–3; 3 यूहन्ना 9–10)। आपस में एक दूसरे पर इस तरह की परस्पर निर्भरता, एक दूसरे के सदस्यों को ग्रहण करने या बरखास्त करने में सहयोग प्रदान करने वाली होनी चाहिये। इसलिये, चर्चेस के मध्य वार्ता होनी चाहिये और अनुशासन के मामलों पर भी समय समय पर विवेकपूर्ण चर्चायें आयोजित करना चाहिये। परंतु, प्रत्येक चर्च अंततः परमेश्वर के सामने उत्तरदायी है कि अपने स्वयं के निर्णय ले सके।

भाग 2

ढांचा लागू करना : मामलो का अध्ययन

मैंने वास्तविक जीवन की स्थितियां लेकर जिनमें मैं सम्मिलित रहा हूं या कम से कम उनके विषय में सुना है, ऐसे कुछ "मामलों का अध्ययन" निम्नलिखित ढंग से तैयार किया है। जहां मैं वास्तविक जीवन में घटी स्थितियों का प्रयोग कर रहा हूं , मैंने वर्णन में कई बदलाव कर दिये हैं, जिसमें सामान्य नाम जैसे "जो" और "जिल" कहकर संबोधन दिया है। दोहराव न हो और स्थान बचे, इसलिये मैंने अधिक विस्तार में जाना उचित नहीं समझा। परंतु इसके स्थान पर मैं पाठक को उस अध्याय का संदर्भ दे देता हूं जहां से मैं उस सिद्वांत को लेकर वर्णन करता हूं। संदर्भ उनके प्रारंभिक अक्षरों से बताये गये हैं जैसे (अध्या. 3) या (प्रस्ता.)।

मैं नहीं मानता कि जो निर्णय इन मामलों में लिये गये, वे हमेशा "अंतिम माने जायें।" उनमें से कुछेक को गलत भी समझा जा सकता है। फिर भी वे मेरे चर्च या अन्य किसी चर्च के सबसे उत्तम प्रयास माने गये हैं जो अध्याय 1 से 4 तक में सुसमाचारिय रूपरेखा के आधार पर किये गये।

प्रत्येक दृश्य अगुवों के नेतृत्व और कलीसियाई नमूनें के संदर्भ पर आधारित है। जिसका अर्थ है कि अगुवे अनुशासन की प्रक्रिया का नेतृत्व करते हैं और एक निश्चित स्तर पर पहुंच जाने के उपरांत कलीसिया यह तय करती है कि उस व्यक्ति का निर्वासन किया

जाना चाहिये अथवा नहीं। इसके लिये सदस्यों की एक सभा बुलवाकर, उनके मत लेकर कार्यवाही को पूर्ण किया जाता है।

अध्याय 6

व्यभिचारी

स्थिति

जो नामक व्यक्ति अपने चर्च की परोपकारी सेवकाई में सक्रियता के साथ संलग्न था, कभी कभी वह इसका नेतृत्व भी करता था। चर्च के अगुवे जो उसके निकटस्थ मित्र थे, उन्होंने मसीही विश्वास के प्रति उसके मन में व्याप्त संदेहों को लेकर उससे बातचीत आरंभ की। एक दिन जो की पत्नी ने चर्च के अगुओं में से एक से संपर्क करके कहा कि जो अभी अभी एक विवाहेतर संबंध में लिप्त हो गया है या और भी संबंध हो सकते हैं। दो चर्च अगुवे उससे कई बार, उसके व्यभिचार और मसीही विश्वास के प्रति जो उसकी उलझन थी, दोनों संबंध में गुप्त रूप से मिले, पर कोई हल नहीं निकला। जो ने स्वीकार किया कि उसके कदम "गलत" थे। पर उन प्रश्नों के उत्तर उसने गोलमाल व अस्पष्ट दिये, जिनमें पूछा गया था कि क्या वह उस महिला से मिलता रहेगा। कई सप्ताह पश्चात, जो ने अगुवों से कहा कि वह अपनी पत्नी को छोड़ रहा है और वह इस विवाह से उकता गया है। कुछ ही दिनों में वह चला गया। क्या जो को चर्च से निष्कासित करना चाहिये? अगर ऐसा है, तो कितनी जल्दी?

पाप की जांच करना

व्यभिचार एक कष्टदायक पाप है जो तत्काल उस व्यक्ति के विश्वास को संदेह के घेरे में ले आता है। आप कह सकतें हैं कि यह विश्वास को पूर्ण रूप से हानि पहुंचाता है। यह धोखा दिये जाने का वह महत्वपूर्ण कार्य है जिसे गैर मसीही भी गलत कृत्य कहते हैं, जैसा प्रायः देखा गया है कि राजनेताओं को व्यभिचार में पकड़े जाने के उपरांत अपना पद छोड़ना पडता है। व्यभिचार का पाप, यीशु का गहन रूप में गलत प्रस्तुतीकरण है, जो कभी अपनी दुल्हन अर्थात कलीसिया के प्रति विश्वासघाती नहीं रहा। व्यभिचार का पाप विवाह को, बच्चों को, कलीसिया को और मित्रता को बर्बाद कर देता है।

दूसरे शब्दों में, व्यभिचार वह पाप नहीं है जिसमें कोई व्यक्ति भोलेपन या अनजाने में फंस जाये। यह एक बहुत निर्मम और पहले से सोच विचार कर किया जाने वाला पाप है, जो व्यक्ति के बहुत कठोर और स्वयं को धोखा देने वाले हृदय को प्रगट करता है। यह कल्पना से बाहर की बात नहीं है कि, कुछ परिस्थितियों में व्यभिचार के दोषी को तत्काल निर्वासित कर देना चाहिये। उदाहरण के लिये, अगर ऐसा मामला है कि व्यक्ति के लिये यह स्पष्ट हो जाता है कि यह उसका आदतन व्यवहार है या जिसे यह नहीं कहा जा सकता कि यह एक रात्रि का संबंध मात्र था या जिससे तत्काल पता चलता हो कि व्यक्ति ऐसा पाप करने के लिये निरंतर प्रतिबद्व है।

पश्चाताप की जांच करना

अगर एक व्यभिचारी पकड़ा जाता है, जैसे जो पकड़ा गया था, उससे यही अपेक्षा की जायेगी कि वह अपनी सफाई देगा, कम से कम पहली बार तो वह सफाई देगा, भले ही वह मसीही जन क्यों न हो। ऐसे पाप करने वाले का हृदय बहुत कड़ा हो चुका होता है इसीलिये वह भटकता है। तौभी एक मसीही जन के हृदय को तेजी से पिघल जाना चाहिये अगर उस पर यौन संबंधों को लेकर आरोप लगे हुये हों कुछ घंटों के भीतर नहीं तो कुछ दिनों के भीतर यह होना चाहिये। पश्चाताप करने वाले व्यभिचारी जन के लक्षण दिखाई देते हैं, पौलुस कहता है, कि परमेश्वर भक्ति का शोक, पाप से पश्चाताप, पाप के प्रति क्षोभ, भय, लालसा, धुन और अन्य बातें भी प्रगट होती हैं (2 कुरू 7:11)।

जो प्रारंभ से ही टालमटोल करने वाला व्यक्ति था। यह स्पष्ट नहीं था कि वह पाप में लिप्त रहना चाहता है, पर यह भी स्पष्ट नहीं था कि वह उसे त्यागना चाहता हो।

दो सप्ताह तक, जब केवल दो अगुवों ने उससे इस स्थिति के बारे में जानना चाहा, तो वह अनिर्णय की स्थिति में दिखाई दिया कि कौन से मार्ग पर जाये। इस कारण, उन्होंने तत्काल कोई निर्णय लेने का फैसला नहीं किया।

दूसरे तथ्य

जो अपने विश्वास के प्रति तथाकथित संदेह में था, इन कारणों ने भी अगुवों द्वारा तत्काल निर्णय नहीं लेने पर असर डाला। वह तो इस विचार में भी दिलचस्पी लेने लगा कि वह मसीही व्यक्ति नहीं है, जिस के कारण उसकी शिकायत से निपटने में फक्र आ सकता था

(देखिये पौलुस उनके मध्य अंतर स्पष्ट करता है, संसारी लोग जो यौन संबंधों में अनैतिक हैं और जो ''भाई कहला कर'' अनैतिकता में लिप्त हो (1 कुरू 5:9–11)। तो अगुवों ने उसके संदेहों और अविश्वसनीयता का अनुमान लगाया, जो आपस में जुड़े हुये थे परंतु यह स्पष्ट नहीं हुआ कि कौनसी बात पहले हुई।

निर्णय

जैसे ही जो ने घोषित किया कि वह विवाह संबंध तोड़ रहा है और उसने चले जाने के द्वारा भी इसको दिखाया, तब अगुओं ने तय कर लिया कि उसमें पश्चाताप के लक्षण नहीं है (अध्या. 3)। जो को निरंतर चेतावनी दी गयी परंतु वह यीशु के पीछे आने के बजाय पाप के पीछे जाने के लिये दृढ़ दिखाई दिया। वह जानता था कि वह क्या कर रहा था। इसलिये उन दोनों अगुवों ने संपूर्ण अगुवों की समिति की सहायता से, जो के तत्काल निर्वासन का निर्णय ले लिया (अध्या. 3 और 4)। चर्च संगठन ने इसे स्वीकृति प्रदान कर दी।

अध्याय 7

लत

स्थिति

जिल जुआ खेलने की आदी थी। उसका लालन पालन ऐसे घर में हुआ जहां उसके माता पिता मनोरंजन के लिये जुआ खेलते थे और उसका कभी कोई बहुत बड़ा परिणाम नहीं आया। लॉस वेगास में उनकी पारिवारिक यात्रा के दौरान वे उसे जुआ खेलने का भत्ता भी देते थे। कॉलेज में, जिल की जुआ खेलने की आदत और बढ़ गई। वह कैसिनो जाने लगी। उसने ऑनलाईन अनेक काल्पनिक लीग में हिस्सा लिया। उसके सेल फोन पर जुए से संबंधित सारे अनुप्रयोग उपलब्ध थे।

कॉलेज समाप्त करके जब जिल मसीही बन गई उसका जुआ खेलना अपने आप धीमा हो गया, उसके पीछे बड़ा कारण यह था कि उसके भीतर नया विश्वास पैदा हुआ था। फिर, एक साल उपरांत, उसने और अधिक जुआ खेलना आरंभ कर दिया। पहले तो, उसके मसीही मित्र जो स्वयं भी कुछ अपरिपक्व थे, उसकी जुए की कहानियों को मजेदार समझते थे। पर अधिक समय नहीं बीता और उनके समझ में यह बात आ गई कि उसके साथ एक गंभीर समस्या है। उन मित्रों में से एक ने जिल से सीधे पूछ भी लिया और जिल ने भी माना कि

जुआ एक समस्या हो सकती है अगर इसे गैर जिम्मेदार रूप में खेला जाता है, मगर उसने दावे के साथ यह कहा कि उसकी आदत नियंत्रण में है।

उसके बाद जिल का विवाह हो गया। एक साल बाद जुए की लत उसके वैवाहिक जीवन में भी खलल डालने लगी। जब उसके पति ने उसके पाप की ओर इशारा किया, उसने पति पर ही आरोप लगा दिया कि जब कॉलेज में उनकी मित्रता थी, तब उसने भी बॉस्केट बॉल गेम्स के उपर पैसों की शर्त लगाई थी। पर एक बार एक बुरे अनुभव के बाद, जब वह जुए में लगभग दो हजार डॉलर हार गयी, तब वह थोड़ी नरम पड़ गयी; उसने स्वीकार किया कि उसे जुए की लत है जो एक समस्या है और उसने उसे त्याग देने का विचार किया। चर्च मित्रों ने भी इसकी जिम्मेदारी स्वीकारी।

महिनों बीत गये। पहले तो मित्रों ने जो जिम्मा लिया था कि उसे इस आदत से दूर रखेंगे, वह धीरे धीरे कम होता गया। जिल ने पुनः जुआ खेलना आरंभ कर दिया। समस्या फिर तेजी से गहरा गयी। जैसे ही वह जीतती, वह उससे बड़ी राशि का जोखिम उठाती और पहले से ज्यादा राशि हार जाती। वह उस गढ्ढे से बाहर आने के लिये और दांव लगाती पर अधिक गहरे में गिरती जाती। उसके बाद सब ध्वस्त होता गया, वह रोई भी और उसने वायदे भी किये कि वह इस खेल से दूर रहेगी, यहां तक कि चर्च के सलाहकार से भी मिलने का सोचा। पर आगामी महिनों में यह चक्र अनेकों बार दोहराया गया।

अंततः, एक रात, चर्च के एक अगुवे को जिल के पति की ओर से एक फोन आयाः जिल को नशें में चूर होकर एक पुलिस अधिकारी से, जो उस समय अपने कार्य पर तैनात नहीं था, बहस करने के जुर्म में बंद कर दिया गया था। वह कैसिनों में थी, हजारों की राशि हार चुकी

थी, सब कुछ डरावना लग रहा था, इसलिये उसने शराब का सहारा लिया, आपा खो बैठी और परिणाम यह हुआ कि जो पुलिस अधिकारी उसे समझाने का प्रयास कर रहा था, उसने उसे ही घूंसे मारना आरंभ किया। उसने उसे गिरफ्तार नहीं किया परंतु उसे कैसिनों की ''सूखी टंकी'' में पटक दिया और उसके पति को कहा कि उसे वहां से निकाल ले।

अगली प्रातः जिल को बहुत शर्म आई, उसे देखकर ऐसा लग रहा था कि उसे पछतावा था पर वह अपने आप को बचाने का प्रयास भी कर रही थी। यह उसके लिये शर्मनाक बात थी, परंतु, वह अपनी ओर से बताने का प्रयास कर रही थी कि उसका पाप इतना बुरा नहीं था। उस कैसिनों में तो ऐसे सूखी टंकी होती ही है, उसका कहने का तात्पर्य था कि वह अपने पाप को प्रचलन में बता रही थी। इसके उपरांत भी जब अधिकारी ने उसे बंद कर दिया था; क्या उसके मसीही मित्र उसे देखकर ऐसा नहीं करना चाहेंगे?

क्या चर्च को जिल जैसी व्यसनी महिला को चर्च से निर्वासित कर देना चाहिये जो अपने व्यसन और उसके परिणाम के लिये थोड़ा ही पछतावा प्रगट कर रही है?

पाप को जांचे

मसीही जन इस पर असहमत हो सकते हैं कि थोड़े डॉलर कमाना पाप है या नहीं। परंतु अधिकतर मसीही इस बात पर सहमत होगे कि बड़ी राशि का जुआ लगाना, विशेषकर एक आदतन फैशन में, परमेश्वर द्वारा दिये गये संसाधनों का पापमयी व गलत ढंग से रखरखाव करना है। इससे भी बढ़कर, यह एक मूर्तिपूजा के समान इच्छा रखने से प्रेरित है कि हम बेवजह कुछ पाने की उम्मीद लगाये हुये हैं। इससे भी बढ़कर, ऐसी लत, एक मसीही को

चर्च में किसी जरूरतमंद को उदारतापूर्वक देने से रोकती है। निश्चित ही यह अपने पड़ोसी से भी प्रेम करने में असफलता को प्रगट करती है (बल्कि क्या उसे जुए में बड़ी राशि लगाने के लिये प्रेरित नहीं करेगी?)।

जिल का पाप स्पष्ट दिखाई दे रहा था और उसे नियंत्रण में किये हुए था। जोखिम लेनें में उसे मजा आ रहा था, इसके द्वारा वह यथार्थ से भी भाग रही थी, ऐसा करके वह स्वयं को महत्वपूर्ण समझ रही थी (उसने इसे स्वीकार किया), जैसे दांव जीतने के द्वारा वह संसार और अवसरों के उपर अपनी प्रवीणता को दर्शा रही हो। यह स्पष्ट था कि उसने जोखिम लेने की अपनी भावना रूपी एक प्रतिमा गढ़ ली थी जिसके बदले में उसे कुछ नहीं मिल रहा था।

इसके साथ साथ ही जब जिल का पहले स्थान का आदर्श उसे निराश कर देता तो वह शराब में सहारा ढूंढती, जो और समस्या को बढ़ाने वाली लत थी। शराब पीने के बाद, जो उसका हिंसक व्यवहार था, वह मसीही गवाही के लिये उसके असम्मान और उसके कठोर हृदय को प्रगट करता था।

पश्चाताप को जांचना

फोन आने के बाद से ही जिल के लिये सालों से अनुशासन की प्रक्रिया प्रभावशाली ढंग से जारी थी। उसे कई चेतावनीयां दे दी गयी थीं। उसकी देखभाल के लिये कई जिम्मेदारियां निर्धारित की गयी थी। परंतु जिल उन सारी बातों को आसानी से भूल जाने में सक्षम थी। कभी कभी वह अपने पाप के प्रति खेदित दिखाई देती, फिर बार बार वह अपने पाप की ओर मुड़ जाती, जैसे कुत्ता अपनी छांट की ओर लौटता है (नीतिवचन 26:11)। हर बार, समस्या

और बद्तर होती जाती, जैसे कोई दुष्टात्मा एक बार लौट जाने के बाद वापस अपने सात भाइयों को लेकर लौटती है (मत्ती 12:44–45)।

परमेश्वर का धन्यवाद हो, जिल ने रूक रूक कर अपने पाप से संघर्ष करने का विचार किया, और उसने इस ताजी घटना के बाद ऐसा करने का वायदा किया। उसने अगले दिन खेद अवश्य व्यक्त किया। परंतु जब अगुवों ने उससे इस मामले पर चर्च की तो उन्हें ऐसा प्रतीत हुआ कि संध्या समय हजारों डॉलर गंवा देना, मदोन्मत हो जाना, पुलिस आफिसर पर हाथ उठाना, बंद हो जाना, पुर्नजन्म पाया हुया हृदय ऐसे कृत्य नहीं करता है।

तीन विवरण अधिक समस्या पैदा करने वाले थे : जुए की तीव्र लत, पीने की सार्वजनिक घटना और जिल के हृदय की कड़ाई, और जितने वायदे उसने बदलाव लाने के लिये पहले किये थे, उन्हें सुनकर ऐसा लगता था, जैसे सबने वे वायदे पहले सुन रखे थे। एक अगुवे ने इस घटना को ''बर्दाश्त से बाहर'' करार दिया। सारे अगुवे राजी हो गये कि इस महिला के शब्दों पर विश्वास नहीं किया जा सकता (अध्या 3 और 4)। सारी सामान्य जिम्मेदारियों की जो व्यवस्था की गयी थी और पासबानी मंत्रणा भी की गयी, उसका कोई फल सामने नहीं आया, स्थिति और बिगड़ती चली गयी।

एक समय ऐसा आया कि उसका पति भी उसके शब्दों पर विश्वास नहीं कर पाया और उसने अगुवों द्वारा अपनी पत्नी को निर्वासित करने के निर्णय को उचित ठहराया, इसलिये नहीं कि वह उससे प्रेम नहीं करता था, पर इसलिये कि वह उससे प्रेम करता था और उसका भला चाहता था (परि.)।

निर्णय

रविवार संध्या जब पुलिस अधिकारी का फोन आया तो अगुवों ने जिल को उसकी जुए खेलने की तीव्र लत और पियक्कड़पन के कारण निर्वासित करने की अनुशंसा की। यह पहला अवसर था जब कई लोगों ने इसे सुना और विचार किया कि उसे वास्तव में निकाले जाने के पूर्व कलीसियाई स्तर पर चेतावनी देना ठीक होगा या नहीं। अगुवों ने समझाया कि जिल ऐसी हरकतें लंबे समय से करती आ रही है, जिसमें अब तक का उसका अत्यंत खराब प्रदर्शन, मदोन्मत्त होकर पुलिस अधिकारी के साथ झगड़ा करने का सामना आया है, जो चर्च को भी इस स्थिति में रखता है कि जिल की ईमानदारी की पुष्टि अब नहीं की जा सकती है, कम से कम कुछ समय के लिये तो नहीं की जा सकती (अध्या 3)। परंतु यह उम्मीद रखी जा सकती है कि अगर आगे आने वाले समय में वह पश्चाताप का व्यवहार प्रगट करेगी, तो उस समय हम खुशी खुशी और जिम्मेदारी पूर्वक उसके विश्वास की पुष्टि कर देंगे (अध्या 5)।

जिल का पति चर्च सदस्यों की सभा में उपस्थित हुआ। वह चाहता था कि कलीसिया जान ले कि वह अगुवों का समर्थन करता है। वह जिल को भी बता देना चाहता था कि वह चर्च के निर्णय के साथ खड़ा है ताकि इस निर्वासन के प्रभाव को कोई हल्के स्तर पर न ले सके। पूरी कलीसिया ने जिल को निकाले जाने के पक्ष में मत दिया सिर्फ एक मत की असहमति आई।

अध्याय 8

कानून तोड़ने वाली स्थिति का "समाचार जोरों" पर था

स्थिति

चर्च अगुवों और कलीसिया को मंगलवार सुबह स्थानीय समाचारों से पता चला कि जो को उसकी कंपनी में चोरी के आरोप में गिरफ्तार किया गया। संवाददाता ने कहा, जो लगभग पांच सालों से अपनी कंपनी से कई हजार डॉलर चुराने में सफल रहा। जो, कोर्ट और चर्च अगुवे के साथ गुप्त बातचीत में दोषी नहीं पाया गया। क्या उसके सार्वजनिक प्रकृति वाले पाप के कारण चर्च को उसको तत्काल निर्वासित कर देना चाहिये?

पाप की जांच

एक चर्च सदस्य के नाते, अनेक सालों से कई हजार डॉलर की चोरी करना, यह संकेत देता है कि उसके हृदय में पाप गहराई से बैठा हुआ है और वह बहुत ही कठोर हो चुका है और बेईमान है। ऐसा पाप निर्मम व सोच विचार के साथ किया हुआ पाप कहलाता है।

पश्चाताप की जांच करना

पाप को सुचिंतित तरीके से करने, इस पाप को करने की अवधि व इसकी चालबाज प्रकृति के प्रकाश के आधार पर एक चर्च समझदारी से निर्णय ले सकता है कि चर्च ऐसे व्यक्ति के विश्वास की पुष्टि नहीं कर सकता है और इसीलिये उसे तत्काल निर्वासित करता है। ऐसा व्यक्ति पश्चाताप कर सकता है, परंतु चर्च को यह पता करने में बहुत मेहनत करनी पड़ेगी कि वह सचमुच में पश्चातापी है या नहीं। इससे भी बढ़कर, गबन और छल कपट वाला पाप यह बताता है कि ऐसे व्यक्ति में अपश्चातापी होने के लक्षण हैं (अध्या 3 व 4)।

यह जांच बताती है कि जो दोषी था पर अभी वह दोषी सिद्व नहीं हुआ था। कोर्ट ने अभी तक निर्णय नहीं दिया था। अगुवे कोर्ट के निर्णय के आगे अपने निर्णय को कम नहीं ठहरने देना चाहते थे (अध्या 1) । वे निश्चित ही जो को निर्वासित नहीं करना चाहते थे क्योंकि हो सकता था कि कोर्ट अंततः उसे निर्दोष ठहरा दे।

निर्णय

चूंकि कलीसिया समाचार पत्रों के माध्यम से पहले ही स्थिति को जान चुकी थी, अगुवे जानते थे कि उन्हें कलीसिया को जवाब देना होगा। इसलिये अगुवे इस बात पर सहमत हुये:

1) इस व्यक्ति के लिये औपचारिक अनुशंसा करने से पहले कोर्ट के निर्णय का इंतजार करें;

2) कलीसिया को बतायें कि उनकी कार्यवाही का यह तरीका रहेगा;

3) कलीसिया से प्रार्थना करने के लिये कहें और जो व उसके परिवार के प्रति इस बीच में प्रेम प्रगट करें;

4) उन्होंने जो को गुप्त रूप में प्रोत्साहित किया कि वह रविवार की सभाओं में आया करें, परंतु वह जानता था कि अगर वह दोषी पाया गया तो उसे प्रभु भोज लेने से रोक दिया जायेगा। वे मान रहे थे कि अगर वह दोषी होगा तो उनकी सलाह की उपेक्षा कर देगा। परंतु फिर भी सलाह देना उनका कर्त्तव्य था।

अध्याय 9

कुचले हुए सरकण्डे

परिस्थिति

जिल की परवरिश अकेली उसकी मां ने की थी जिसके अनेक मित्र थे, जिन्होंने उसके और जिल के साथ बहुत दुर्व्यवहार किया था। जिल भी एक स्थायी पुरूष व्यक्तित्व की तलाश में किशोरावस्था में ही कई पुरूषों के संपक्र में आई और उन्होंने उसका शोषण किया। वह स्वयं को नुकसान पहुंचाने और भोज्य पदार्थ उगलने के विकार से ग्रसित रही।

कॉलेज में, उसे चर्च के मित्रों का एक समूह मिला जो उसकी चिंता किया करता था। इसी रास्ते पर चलकर उसने स्वयं को मसीही कहना आरंभ किया और बपतिस्मा लिया। उसके चर्च में सुसमाचार प्रचार किया जाता था, परंतु अधिकतर प्रचार उथला था और चर्च इस तरह बहुत कम अपनी जिम्मेदारी को पूरी कर रहा था। अधिकतर चर्च सदस्य जिसमें जिल भी शामिल थी, इसी तरह अज्ञात बने रहे। जिल पुनः अपने पुराने यौन संबंधी पापों में और स्वयं को नुकसान पहुंचाने वाली प्रवृत्ति की दुनिया में लौट गई।

कॉलेज के पश्चात, वह एक नये चर्च में जाने लगी जहां बड़ी विश्वसनीयता से बाइबल पढ़ायी जाती थी और सदस्यता के उपर जोर दिया जाता था। वह उस चर्च में शामिल हो

गई। यद्यपि, वह उस नये चर्च के बाहरी घेरे में ही बनी रही परंतु महिलाओं के एक छोटे समूह में उसने हिस्सा लिया, जहां समय बीतने के साथ, उसने स्वीकार किया कि वह कितनी अकेली थी और स्वयं उसको ही आश्चर्य हुआ कि कैसे उसने अपने यौन संबंधी पापों को स्वीकार किया।

एक दिन, वह उस सहायक समूह के एक सदस्य के साथ पास्टर के आफिस पहुंची और उसने कई महिनों तक अपनी चौंकाने वाली यौन संबंधी गतिविधि को आंसुओं के साथ स्वीकार किया। क्या जिल को निर्वासित कर देना चाहिये?

क्या उसके हालात निर्णय के उपर भारी पडेंगे?

पाप की जांच

सामान्य तौर पर व्यभिचार मसीही विश्वास के सामने प्रश्नचिंन्ह खड़े करता है, विशेषकर जब व्यभिचार एक परिपाट या जीवन शैली बन जाता है, जैसा जिल के साथ हुआ। जब वह प्रारंभ में मसीहत में आयी थी, वह जानती थी कि यह गलत था, पर चर्च ने उस पाप को इतनी गंभीरता से नहीं लिया। कॉलेज के नेता आपत्तिजनक चुटकुले सुनाते थे और उनके समूह के सदस्य उसके आस पास बने रहते थे। जिल ने इन्हीं बातों का बहाना लेकर अपने विवेक को कठोर कर लिया।

नये चर्च में उसका पागलपन और बोध बढ़ता चला गया। फिर भी उसकी यौन संबंधी प्रवृत्ति और भावनात्मक आवश्यकतायें बहुत गहरी थीं। स्वयं को नुकसान पहुंचाने का अस्थायी भाव उसे अपने व्यभिचारी पाप के बोध के उपर थोड़ा आराम देता था।

पश्चाताप की जांच करना

जिल के पाप का तरीका जितना चिन्ताजनक था, उसके द्वारा पश्चाताप के लिये उठाये गये कदम उतने ही प्रोत्साहित करने वाले थे (अध्या 3)। पहले, उसे स्वयं अपने पाप का बोध हुआ; वह पाप में पकड़ी नहीं गयी थी। दूसरा, उसने इस बात को अपने छोटे समूह में बताया और जब उसे बहुत शर्मिन्दगी हुई तो वह पास्टर के पास पहुंची जिनको वह दूर से आदर देती थी और किसी के द्वारा ही पहचानती थी। तीसरा, चर्च के एक स्टॉफ़ सदस्य की मंत्रणा पर वह उनसे मिलने के लिये राजी हुई। चौथा, उसने कहा कि वह चाहती है कि अगुवों को नहीं बताया जाये, परंतु वह पास्टर के निर्णय का सम्मान करेगी, यह जानते हुये कि वह उसके भले के लिये ही कार्य करेंगे। इन सब बातों के द्वारा, जिल ने स्वयं को बचाने का प्रयास नहीं किया (अध्या 3)। उसने गंभीरतापूर्वक अपने अतीत के लिये पश्चाताप किया और भविष्य में एक अलग जीवन की चाह की।

स्वयं को नुकसान पहुंचाने की प्रवृत्ति उसके लिये एक समस्या थी क्योंकि सुसमाचार पर उसकी पकड़ कमजोर थी। फिर भी, नुकसान पहुंचाने की प्रवृत्ति और यौन संबंधों के पाप को प्रकाश में लाने के उसके निर्णय ने उसके पश्चाताप को प्रदर्शित किया भले ही इसकी कीमत उसे क्यों न चुकाना पड़े।

दूसरे तथ्य

जब पास्टर ने उसकी स्थिति का आकलन किया, तो यह पाया कि उसके पाप में जिल की पारिवारिक पृष्ठभूमि ने भी गंभीर भूमिका निभाई। एक महिला जो चर्च के वातावरण में

पली–बढ़ी होती हो और जो एक अच्छे परिवार से आती हो व चर्च सेवकाई में सक्रिय रहती हो, अगर वह इस तरह के पाप को स्वीकार करती, तो उसकी जांच अलग ढंग से होती।

निर्णय

अंत में पास्टर ने निर्णय लिया कि इस स्थिति को संपूर्ण अगुवों की समिति के सामने रखा जाये, परंतु उसे निर्वासित नहीं किया जाये। उसने जिल की कहानी बताई ताकि स्वयं अपनी प्रतिक्रिया को भी जांच सकें और इसके द्वारा अगुवे भी जान सकें कि कैसे एक आघातयुक्त कुचले हुये जीवन को संभाला जा सकता है। कोई भी औपचारिक कदम नहीं उठाया गया।

अध्याय – 10

अनुपस्थित सदस्य

स्थिति

जो ने जनवरी में चर्च आना आरंभ किया था, कुछ छः महिनों तक अनियमित ढंग से वह चर्च आता रहा, तत्पश्चात उसने चर्च आना बिल्कुल बंद कर दिया। जिस समय वह चर्च आता था, वह देर से चर्च में आता और जल्द चला जाता और उसने किसी सदस्य से कोई सहभागिता भी नहीं रखी।एक अगुवे ने उसे फरवरी में दोपहर के भोजन के लिये आमंत्रित किया और वह इस प्रयास में थे कि उसे आगे भी भोजन के लिये आमंत्रित करते रहें। परंतु जो हर आमंत्रण को यह कहकर कि, "कुछ काम आ गया था मुझे खेद है!" ऐन वक्त पर रद्द कर देता था। चर्च में कोई भी जो को नहीं जानता था।

सितंबर में उस अगुवे ने ध्यान दिया कि उसने जो को जून माह से चर्च में नहीं देखा है और निश्चित किया कि उससे संपक्र किया जाये। उसने उसके लिये व्हाईस मेल छोड़ी। कुछ सप्ताह पश्चात, उसने दूसरी व्हाईसमेल छोड़ी, साथ ही ई मेल भी भेजी। उसके किसी भी संदेश का कोई उत्तर नहीं मिला। कुछ और माह बीते और जो न दिखाई दिया और न उसके बारे में कोई खबर थी। एक दो संदेश और उसके लिये छोड़े गये। इस बिंदु पर पहुंचकर, उस अगुवे ने दूसरे अगुवों को स्थिति से अवगत करवाया, उनमें से दो ने जो को

फोन किये अथवा ई मेल संदेश भेजा। अगुवों की कई सभाओं के उपरांत जो का नाम फिर से सभा में आया और प्रत्येक जन इस बात पर सहमत था कि उनको पिछले आठ महिने से जो की कोई खबर नहीं है।

तो क्या जो को चर्च से निर्वासित कर देना चाहिये? अगर ऐसा है तो किस पाप के कारण?

पाप की जांच

जो के पाप को कई तरीके से समझाया जा सकता है। उसे चर्च के साथ बांधी गयी वाचा को तोड़ते हुये देखा जा सकता है जिसमें उसने वायदा किया था कि वह स्थानीय चर्च के प्रति जिम्मेदारी लेता है। उसे इस बात के लिये चिंन्हित किया जा सकता है कि वह परमेश्वर से प्रेम करने का दावा करता है परंतु चर्च के अपने भाई बहिनों की उपेक्षा करके उनको नापसंद करता है (1 यूहन्ना 4:20–21)। शायद, अधिक ठोस रूप में कहें तो जो इब्रानियों की आज्ञा 10:24–25 को तोड़ रहा था, जिसमें कहा है, "और प्रेम और भले कामों में उकसाने के लिये एक दूसरे की चिंता किया करें। और एक दूसरे के साथ इकट्ठा होना न छोड़े, जैसे कि कितनों की रीति है, पर एक दूसरे को समझाते रहें; और ज्यों ज्यों उस दिन को निकट आते देखो, त्यों त्यों और भी अधिक यह किया करो।" इब्रानियों का लेखक मसीहियों को नियमित मिलने की आज्ञा देता है ताकि वे एक दूसरे को प्रोत्साहित कर सकें और एक दूसरे को प्रेम व भले कार्यो के लिये उकसा सकें, यह उपर के पहले दो बिंदुओं को भी समझने में भी सहायक है। लेखक तब न्याय के दिन की ओर संकेत देता है जिसमें हमें ईनाम मिलेगा कि इसे क्यों किया जाना आवश्यक था। दूसरे शब्दों में, वह इस पाप को वास्तव में बहुत गंभीरता से लेता है।

चर्च से गैरहाजिर रहना कुछ कुछ व्यभिचार के समान ही पाप दिखाई पड़ता है। इसके साथ ही यह ऐसा पाप है जो अक्सर दूसरे पापों को भी छिपा लेता है या दूसरे पापों की ओर ले चलता है। इसके अतिरिक्त, संयुक्त राज्य नाममात्र के मसीहियों से भरा हुआ है जो सुसमाचार की गलत छवि को प्रस्तुत करते हैं क्योंकि चर्चेस ने गैरहाजिर रहने वालों के प्रति कोई जिम्मेदारी ही नहीं ली।

और तो और, अगर चर्च सदस्यता का अर्थ यह है कि चर्च, व्यक्ति के विश्वास की सार्वजनिक पुष्टि करे तो गैर हाजिरी भी चर्च द्वारा जिम्मेदारी पूर्ण करने में असक्षमता प्रस्तुत करती है। चर्च अब, सत्यनिष्ठा के साथ एक व्यक्ति की शिष्यता की देखभाल का दावा नहीं कर सकता। इसलिये, निर्वासन के द्वारा ही स्थिति सुधर सकती है। यह चर्च के कहने का तरीका होगा, "कि हम इस व्यक्ति के लिये जिम्मेदारी नहीं लेते हैं। इसलिये हम औपचारिक रूप से उसके विश्वास की पुष्टि भी नहीं करेंगे (अध्या. 2)।"

पश्चाताप की जांच

चूंकि जो ने अगुवों की ई मेल्स और फोन कॉल्स का उत्तर देने से इंकार कर दिया, इसलिये यह कहने के अलावा कि उसमें पश्चाताप के चिंन्ह नहीं दिखाई दिये पश्चाताप को जांचने का कोई तरीका ही नहीं था।

निर्णय

फिर भी, अगुवों ने तत्काल बर्खास्त करने का निर्णय नहीं लिया। बल्कि, उन्होंने तय किया कि इसे "चर्च को बताया जाये", मत्ती 18 का प्रयोग यहां देखा गया (अध्या. 1) । अगली

बार सदस्यों की सभा में, जो का नाम कलीसिया के सामने रखा और उन्हें बताया कि इसके बाद भी अगर स्थिति नहीं बदलती है, तो वे उसे अगले दो महिनों के बाद होने वाली सदस्यों की नियमित बैठक में गैरहाजिरी के आरोप में चर्च से बर्खास्त कर देंगे। उन्होंने सदस्यों को यह कहकर भी प्रेरित किया कि अगर जो उनमें से किसी के साथ संपक्र में रहता है, तो उसे ई मेल भेजे अथवा फोन करें। अगुवों ने इस मौके को उदाहरण के लिये प्रयुक्त करते हुये कलीसिया को भी समझाया कि क्यों चर्च में हाजिरी आवश्यक है।

उन्होंने बर्खास्तगी का निर्णय कम से कम पांच कारणों से दो महिने के लिये और टाल दिया (अध्या. 4)। पहला, इसने जो को और समय दे दिया, जैसा कि मत्ती 18 में समझाया गया है, ताकि उसे पश्चाताप करने का मौका मिले। दूसरा, अगर जो के कोई मित्र थे जिनके बारे में अगुवे नहीं जानते थे, तो उन्हें भी मौका दिया कि वे जो को पश्चाताप करने के लिये कहें। तीसरा, इससे एकदम धक्का लगने वाले तथ्य की उपेक्षा की जा सकती है जो तत्काल निर्वासित किये जाने के बाद लगता है। शैतान अक्सर ऐसे धक्कों को, कमजोर व अपरिपक्व भेड़ों के विश्वास को डगमगाने के लिये प्रयुक्त करता है, वह विश्वास जिसे वे अपने अगुवों में प्रगट करते हैं। चौथा, भटकी हुई भेड़ों को खोजने का यह अंतिम तरीका होता। पांचवा, यह कलीसिया को अवसर प्रदान करता कि वे मिलकर जो के लिये प्रार्थना कर सकें।

दो महिनों के उपरांत, जब जो की कोई खबर नहीं आई, अगुवों ने उसकी बर्खास्तगी का निर्णय लिया और कलीसिया ने एकमत होकर सहमति प्रदान कर दी।

अध्याय – 11

विश्वासपूर्वक उपस्थित परंतु विभाजक व गैर सदस्य वाली स्थिति

स्थिति

जिल और उसके पति लगभग बीस सालों से चर्च में आ रहे थे। उन सालों में चर्च ने औपचारिक तौर पर उनकी सदस्यता को घोषित नहीं किया और जिल और उसके पति ने भी कभी सदस्यता नहीं ग्रहण की। तौभी, दोनों प्रत्येक गतिविधि में सक्रियता से सम्मिलित होते थे, चाहे नयी मांओं के लिये भोजन का आयोजनो से लेकर संडे स्कूल में पढ़ाने तक के कार्य में वे संलग्न रहते थे। और वे शायद ही कभी रविवार की भक्ति में अनुपस्थित रहते।

जिल सक्रियता से अफवाह फैलाने के काम में भी लगी रहती थी। वह सबसे पहली महिला थी जिसे किसी दंपत्ति में विवाहेत्तर संबंध, कोई आर्थिक परेशानी, विद्रोही किशोरों की भनक लगती थी।

जब एक नये पास्टर पहुंचे और उन्होंने चर्च सदस्यता को नियमानुसार व एक अर्थपूर्ण ढंग से अमल करने की सोची, ज्यादातर सदस्यों ने खुशी खुशी सहमति दे दी। किंतु, जिल और उसके पतिदेव नाखुश थे। उन्होंने अपनी मसीहत की पुष्टि से संबंधी कोई भी दस्तावेज हस्ताक्षरित करने से इंकार कर दिया। उन्होंने बहस की कि "चर्च एक परिवार होता है! और

परिवार के सदस्यों से यह कहकर ऐसे हस्ताक्षर कौन करवाता है कि तुम परिवार के सदस्य हो?''

कई वर्षों तक नये पास्टर ने कई बदलाव चर्च में किये जिनको जिल और उसके पति ने कभी पसंद नहीं किया, जैसे कि केवल सदस्य ही संडे स्कूल में पढ़ा सकते थे और दूसरी सेवकाई में जैसे चर्च द्वारा प्रायोजित आतिथ्य भाव वाली गतिविधि में भाग ले सकते थे। इन बदलावों से, वह दंपत्ति और अधिक चिढने लगा, विशेषकर जिल।

एक दिन, जिल ने किराना स्टोर के पिछले हिस्से में पास्टर को एक आकर्षक युवा महिला से बात करते हुये देखा जो कि उनकी पत्नी नहीं थी। जिल दूर खड़ी हुई थी, परंतु उसने सोचा कि उसने पास्टर को उस महिला का कंधा स्पर्श करते हुये देखा और बदले में वह महिला या तो चीखी या हंसी। जिल अनिश्चय में थी। परंतु उसने उसके मित्रों को यह बताना आरंभ कर दिया कि पास्टर का किसी से प्रेम प्रसंग चल रहा है और उनके लिये प्रार्थना किये जाने की आवश्यकता है। यह अफवाह फैलने लगी और बाद में यह बात अगुवों तक भी पहुंची।

पहले तो, जिल ने इस मुद्दे को सीधे पास्टर या अगुवों के सामने नहीं कहा, परंतु जब दो अगुवों ने उससे ऐसी अफवाह रोकने के लिये कहा और अपने मित्रों से क्षमायाचना करने को कहा, तो जिल ने पास्टर और उनकी पत्नी का सामना करने का विचार किया। उस समय तक जिल स्वयं से यही मानती रही कि पास्टर का सचमुच में किसी से प्रेम प्रसंग है। अगुवों ने उससे इस आरोप के पक्ष में किसी की साक्षी लाने के लिये कहा (1 तिमोथी 5:19) । वह ऐसा कोई साक्ष्य नहीं ला सकी परंतु उसने स्वयं को गलत मानने से इंकार कर दिया। जब अगुवों ने उसे अफवाह फैलाने और चर्च में विभाजक का कार्य करने के आरोप में बर्खास्त

करने की चेतावनी दी, तो जिल ने उनसे कहा कि उनके पास कोई अधिकार नहीं है कि उसे बर्खास्त करें क्योंकि वह चर्च की सदस्य नहीं है?

क्या कोई चर्च गैर सदस्य को बर्खास्त कर सकता है? इसके लिये क्या मापदंड हैं जब किसी के द्वारा अफवाह उड़ाने और फूट डालने का कार्य सीमा लांघ जाये और उस पर कार्यवाही करने की नौबत आ जाये?

पाप की जांच

प्रमाणों के आधार पर, जिल कम से कम तीन बातों की दोषी पाई गई : बदनामी करना, फूट डालना और अगुवों की बात मानने से इंकार करना। यीशु व उनके चेलों ने बदनामी करने को बुराई ठहराया है और मसीहियों को इससे दूर रहने को कहा है (मत्ती 15:19; इफि. 4:31; 1 पतरस 2:1)। आखिरकार यह किसी की प्रतिष्ठा को नष्ट कर सकती है और संभवतः किसी मसीही भाई या बहिन की जीविका को भी प्रभावित कर सकती है और इससे चर्च में विभाजन पड़ने का भी खतरा उत्पन्न होता है। पौलुस भी चेतावनी देता है कि जो विभाजन पैदा करते हैं उन्हें दो बार चेतावनी दी जाये और तब बर्खास्त कर दिया जाये (तीतुस 3:10)। विभाजन को सच में, बहुत गंभीरता से लिया गया है। अंततः बाइबल, मसीहियों को, उनके अगुवों के अधीन रहने के लिये कहती है (इब्रानियों 13:17)।

जिल के आरोप किराना स्टोर में हुये घटनाक्रम और उस समय की एक या दो बेतरतीब बातों के उपर आधारित थे। तौभी, दो अगुवों ने चुपचाप से जांच–पड़ताल की, पर जिल के लगाये

आरोप बिल्कुल मनगढंत निकले। उन्होंने उससे इन झूठे आरोपों को लगाना बंद करने के लिये चार बार कहा, परंतु उसने मानने से इंकार कर दिया।

पश्चाताप की जांच

लगभग छः से आठ सप्ताह की बातचीत के पश्चात, यह स्पष्ट हो गया कि जिल पश्चाताप नहीं करने वाली है। बल्कि, हर बार वह अपने स्थान पर कठोर होती गयी, बल्कि उस किराने स्टोर वाली घटना को लुभावने ढंग से बताने लगी। उसके मित्र जो पहले उससे सहानुभूति रखते थे, वे अब पीछे हटने लगे। इसने उसे और चिढ़ा दिया और अब वह कलीसिया के जवान व अपरिपक्व सदस्यों की ओर मुड़ी कि कोई उसका साथ दे।

संक्षिप्त में, जिल सालों से चर्च सेवकाई में हिस्सा लेती आई थी और मसीही के रूप में जानी जाती थी। परंतु अभी अभी जो कुछ महिने बीते, उन्होंने उसकी इस छवि को धूमिल कर दिया (अध्या. 3) । अगुवें एक जैसी राय रखते हुये, उसके द्वारा तीनों पाप में लिप्त होने की बात पर सहमत हुये और उसके द्वारा इन सब बातों के लिये पश्चाताप करने का कोई प्रमाण भी सामने नहीं आया। बल्कि बुरा ही फल प्रगट हो रहा था और अधिक बदतर होता जा रहा था।

दूसरे तथ्य

इस स्थिति का जटिल तथ्य यह था कि जिल इस चर्च की सदस्य नहीं थी। तकनीकी रूप से, वह ठीक थीः उसने कभी कलीसिया के सदस्य होने की औपचारिक प्रक्रिया पूरी नहीं की

और इसलिये चर्च के पास औपचारिक अधिकार नहीं है कि उसे बर्खास्त कर दे (अध्या. 2 व 3)।

उसी के साथ साथ, चर्च में लंबे समय के अपने अनुभव के कारण, वह जानी पहचानी भी जाती थी और कलीसिया उसे पसंद भी करती थी। साथ ही कई लोग तो उसे सदस्य ही समझते थे। कई तो उसके बहुत आभारी थे कि उसने उनकी बहुत सहायता की जैसे कि जवान मातायें, जिनको वह भोजन परोसती थी। कहने का तात्पर्य, वह हर प्रकार से एक सदस्य थी, उसके पाप करने के बावजूद भी। उसकी चर्च में उपस्थिति, उसका लोगों के साथ संबंध, प्रभु भोज ग्रहण करना, चर्च के अंदर और बाहर दोनों के सामने यह गवाही जा रही थी कि चर्च उसके विश्वास की पुष्टि करता है।

निर्णय

बदनामी करना और चर्च विभाजन करने के कृत्य को मापना कठिन हो सकता है, किंतु अगुवे दृढ़ थे कि उसके कार्यो की जांच उनके ठहराये मापदंडों के आधार पर करें :

- वह यह दावा कर रही थी परंतु अपनी बात को पुख्ता बनाने के लिये वह कोई प्रमाण या साक्ष्य नहीं दे पाई।

- जब उससे इन आरोपों को लगाना बंद करने के लिये कहा तौभी उसने कहना न माना।

- वह दूसरे सदस्यों को भी प्रश्न खड़ा करने, संदेह करने और यहां तक कि नेतृत्व की आलोचना करने के लिये भी प्रलोभन दे रही थी।

• वह सक्रियता से अपने साथीगणों को विरोधी बनाने में तुली थी।

• उसकी गतिविधि स्पष्ट रूप से चर्च जीवन को उलझाने वाली थी। इस बात का जिक्र बार बार सदस्यों की बातचीत में निकल आता था। अगुवों का समय इसमें गंवाया जा रहा था। सदस्यों ने भी यह माना कि इस घटनाक्रम ने उनकी संदेश सुनने की क्षमता को प्रभावित किया था।

इसलिये अगुवों ने यह निष्कर्ष निकाला कि यह महिला भेड़िये के समान थी, बाइबल भी चरवाहों को साफ साफ निर्देश देती है कि भेड़ों को भेड़ियें सदृश्य सदस्यों से बचा कर रखा जायें (प्रेरितों के कार्य 20:28–31; देखिये 2 पतरस 2; प्रका. 2:20–29)। इसलिये, उन्होंने गुप्त में उसे प्रभु भोज से वंचित करने के लिये कहा अगर वह सार्वजनिक रूप से माफी नहीं मांगती। कलीसिया को भी सदस्यों की एक सभा में उसकी बदनाम करने व फूट डालने की आदत के लिये चेतावनी दे दी गयी। उन्होंने कलीसिया को उसके साथ एक मसीही महिला के समान व्यवहार करने के लिये नहीं कहा। जब वह भ्रमित करती और विनाश की राह पर लेकर जाने का प्रयास करती है तो उससे बच कर रहने के लिये कहा।

चूंकि वह सदस्य नहीं थी, अगुवों ने कलीसिया के द्वारा कोई कदम नहीं उठाये जाने दिया, न ही उसके लिये "बर्खास्त" शब्द का प्रयोग किया गया (अध्या. 2)। इसके बजाय, उन्होंने कहा कि अगुवों के कदम, निर्देश और चेतावनी के रूप में सामने हैं, जो किसी की देखभाल करने के लिये, उन्हें जारी करने का अधिकार है (प्रेरितों के कार्य 20:28–31)।

अध्याय 12

सुरक्षा की दृष्टि से पदत्याग

परिस्थिती

जो ने अपनी पत्नी को विवाह के बीस साल बाद छोड़ने का निर्णय लिया। वह आर्थिक दृष्टि से सुदृढ़ था और उसकी संपत्तियां भी इस बात को प्रगट करती थी। जब तलाक के विषय में प्रश्न पुछा गया, उसने बताया कि वह और उसकी पत्नी ''अटल रूप से'' अलग हो चुके हैं और ''बस एक सामूहिक घर में'' रह रहे हैं। जो की पत्नी, उदासी के साथ इस बात पर राजी थी, पर उसे तलाक नहीं देना चाहती थी। जो के कई मित्रों ने उससे यह कदम नहीं उठाने के लिये विनती की। आगे चलकर उन्होंने किसी एक पास्टर को सम्मिलित किया जिसने पैंतालीस मिनिट की सभा में ''चर्च अनुशासन'' प्रयुक्त करने के लिये कहा। एक सप्ताह बाद, जो ने कलीसिया के ऑफिस को त्यागपत्र भेजा। उसने एक साथ तलाक के आवश्यक दस्तावेज भी जमा कर दिये।

क्या जो को चर्च से बर्खास्त करना चाहिये? क्या एक चर्च सदस्य सदस्यता से त्यागपत्र देकर चर्च अनुशासन की अवज्ञा कर सकता है?

पाप की जांच

मसीही जन इस बात पर असहमत हो सकते हैं कि यीशु और पौलुस ने तलाक देने के लिये अनुमति दी या नहीं (मत्ती 19:9; 1 कुरू 7:15), परंतु अधिकतर मसीही सहमत हो सकते हैं कि एक मसीही जन अपने साथी को वैध रूप से उन कारणों से तलाक नहीं दे सकता जिन्हें जो नामक व्यक्ति ने प्रगट किया। ऐसा करना परमेश्वर द्वारा ठहरायी गयी विवाह वाचा का उल्लंघन होगा और इसलिये यह पाप है।

इसके साथ ही, ऐसा पाप, जो विशेषकर अनेक चेतावनी के उपरांत भी किया गया है, एक सोचा समझा और विचार पूर्वक किया हुआ कृत्य पाप कहलायेगा। यह उस व्यक्ति द्वारा तुरंत उसके विश्वास पर प्रश्नचिंन्ह लगाता है।

पश्चाताप की जांच करना

इस मामले में पश्चाताप बिल्कुल साफ तौर पर प्रगट होना चाहिये : तलाक के लिये प्रयास करना रोक देना चाहिये। पर फिर भी जो ने अपने कदम उठाने से पीछे हटने के कोई चिंन्ह प्रगट नहीं किये।

दूसरे तथ्य

जो ने अपनी सदस्यता से त्यागपत्र देकर निर्वासन को टालने का प्रयत्न किया। क्या यह वैध था? नहीं। मसीही जन को, मसीह के प्रति आज्ञाकारी होने के लिये बुलाया गया है कि वे स्थानीय चर्च की निगरानी के लिये स्वयं को समर्पित करें (अध्या. 2)। लोग चर्च की सहमति से चर्च सदस्यता में शामिल होते हैं और चर्च से अनुमति लेकर त्यागपत्र देते हैं। कहने का तात्पर्य है कि कोई व्यक्ति यूं ही चर्च में आकर यह नहीं कह सकता कि, "मैं अब चर्च का

सदस्य हूं।'' हर चर्च की अपनी व्यवस्था होती है जिसमें वह एक व्यक्ति के विश्वास को जांच सकता है और उसकी पुष्टि करता है। यीशु ने प्रेरिताई चर्चेस को अपने उद्देश्यों की पूर्ति के लिये परमेश्वर के राज्य की चाबी सौंपी हैं। हां, चर्च की सदस्यता ''ऐच्छिक'' होती है। हम किसी भी चर्च का चुनाव करने के लिये स्वतंत्र हैं, इसके लिये यीशु हमें बाध्य नहीं करते हैं। परंतु कोई चर्च हमें चुनना होगा, इसके लिये यीशु हमें बाध्य करते हैं। जैसे एक व्यक्ति स्वयं से ''सदस्य'' नहीं बन सकता वैसे ही एक व्यक्ति स्वयं को ''सदस्यता से रहित'' नहीं कर सकता। चर्च के सदस्य पहले ही सुरक्षात्मक कदम के रूप में त्यागपत्र देकर चर्च अनुशासन के खतरे से बच नहीं सकते (अध्या. 2); इस तरह के वाचायुक्त संबंध दोनों पक्षों की सहमति से समाप्त होते हैं।[4] ऐसे कदम को अनुमति देना यीशु द्वारा स्थानीय चर्चेस को अपने राज्य के लिये सौंपी गयी चाबियों के महत्व व चर्च अनुशासन के अभ्यास करने का उल्लंघन कहलायेगा। यह ऐसा ही होगा जैसे एक अपराधी मुकदमा चलने के पहले उस देश की नागरिकता से त्यागपत्र दे देता है ताकि उस पर आरोप नहीं मढ़े जायें और वह उन्हें स्वीकार करने से बच जाये।

अगुवों ने निर्णय लिया कि चर्च से उसके त्यागपत्र पर कोई कार्यवाही करने के लिये नहीं कहेंगे। इसके बजाय वे चर्च से जो को तलाक के आधार पर बर्खास्त करने के लिये कहेंगे। चूंकि जो के कदम अनेक चेतावनीयों के उपरांत भी उसके पश्चाताप नहीं करने का चिंन्ह प्रगट कर रहे थे और उसके द्वारा तलाक के लिये आगे कदम उठाना अब एक स्थायी और कानूनी तथ्य बन चुका था। इसलिये वे कलीसिया से जो को तत्काल बहिष्कृत करने के लिये कहेंगे (अध्या. 3 व 4)। कलीसिया सहमत हो गयी और जो को सदस्यता और प्रभु भोज की संगति से निकालने के पक्ष में अपना मत प्रस्तुत किया।

अध्याय 13

नया नया प्रकट अविश्वासी

परिस्थिती

जिल गैरधार्मिक परिवार में पली बढ़ी। कॉलेज में उसने दर्शनशास्त्र में डिग्री हासिल की और स्वयं को अनीश्वरवादी घोषित किया। उसके बाद वह आस्तिक हो गई। फिर उसने जेन बौद्ध धर्म को ग्रहण कर लिया। थोड़े समय बाद, वह एक मसीही लड़के से प्रेम करने लगी और मसीही बनने का निर्णय लिया। कॉलेज के बाद दोनों ने विवाह किया और चर्च में आने लगे।

पांच साल बाद, जिल अपने विश्वास के प्रति प्रश्न उठाने लगी। और अंततः तय किया कि यदि यीशु एक ऐतिहासिक व्यक्ति के रूप में हुये थे, तोभी वह निश्चित ही मुरदों में से जीवित नहीं हुए थे। उसने एक अगुवे के साथ अनेक बार अपने संशय को लेकर चर्चा की, उसके बाद तय किया कि वह अपना विश्वास त्याग देगी, उसने चर्च की सदस्यता से त्यागपत्र देकर, स्वयं को मसीही कहलाना बंद कर दिया।

क्या एक चर्च को विश्वास का परित्याग करने वाले मसीही जन को बर्खास्त करना चाहिये?

निर्णय

एक बार जिल ने निर्णय किया तो पास्टर ने उसे चेतावनी दी और उससे पश्चाताप करने को कहा। परंतु अगुवों से उसे बर्खास्त करने की अनुशंसा नहीं की, न ही अगुवों ने कलीसिया से अनुशंसा करने को कहा। इसके बजाय, उन्होंने घोषित किया कि जिल ने विश्वास त्याग दिया है और स्वयं को अब अविश्वासी कह रही है, इसलिये वे उसका नाम सदस्यता सूची से निकाल रहे हैं। यह बर्खास्त करने वाला कदम नहीं है परंतु हमने उसके अनुरोध पर यह किया है।

उनका तक्र थाः यीशु ने स्थानीय चर्चेस को मसीहियों के उपर अधिकार दिया है, गैर मसीहियों के उपर नहीं (अध्या. 2)। इसलिये, चर्च को इस स्थिति में कार्यवाही का अधिकार नहीं दिया गया है। इसके साथ ही पौलुस ने कहा कि चर्च का न्याय वहां उपयुक्त होता है जहां "कोई भाई कहलाता है" (1 कुरूं 5:11) और जिल अब मसीही नहीं रही।

निश्चित कुछ परिस्थितियों में महत्वपूर्ण सैद्वांतिक मोड़ और स्वधर्म त्याग की अवस्था बर्खास्त करने की ओर ले चलती है, जैसे पौलुस ने तिमोथियुस से कहा (1 तिमोथी 1:18–20) । निश्चित जिल ने जो निर्णय लिया, उसके अनंत कालीन परिणाम भयंकर होंगे जैसा पौलुस उन लोगों के लिये कहता है जो "विश्वास और अच्छे विवेक" से इंकार करते हैं। इस तरह उनका विश्वासरूपी जहाज डूब जाता है (पद 19)। फिर भी, पौलुस तिमोथियुस में जिस परिस्थिति को संबोधित करता है वह सीधे ईशनिंदा कहलाती है (पद 20)। जो लगभग, परिभाषा के अनुसार, चर्च के सदस्यों को गलत दिशा में ले जा सकती है। जिल की स्थिति ऐसी नहीं थी।

अगुवों ने इसलिये कहा कि कोई निर्णय कलीसिया की ओर से नहीं उठाया गया, जैसे एक सदस्य के मरने पर कोई कदम नहीं उठाया जाता है। दोनों ही मामलों में सदस्यता रद्द होती है। यद्यपि उन्होंने निर्देश दिये कि जिल के साथ मित्रता रखी जा सकती है, उसके साथ अन्य गैर मसीही जन को बुलाने जैसा संबंध रखा जा सकता है और उसे सुसमाचार सुनाया जा सकता है।

अध्याय – 14

परिवार के सदस्य की स्थिति

जो की पत्नी अभी अभी अपने जुए ही लत के कारण चर्च से बर्खास्त की गई थी (देखिये अध्याय 7 में इस मसले पर अध्ययन)। जो चर्च के निर्णय से सहमत था। परंतु निर्णय होने के उपरांत, जब वह बाइबल पढ़ रहा था, उसने पाया कि पौलुस कहता है कि ऐसे जन के साथ ''भोजन भी ग्रहण नहीं करना'' (1 कुरूं 5:11)।

जो की पत्नी बहुत अधिक उदास थी और अपने को ठुकराया हुआ महसूस कर रही थी क्योंकि जो ने कलीसिया के साथ होकर अपना मत दिया था। परंतु उसके मन में जो को त्यागने का कोई विचार नहीं था और न जो के मन में उसको छोड़ने की कोई योजना थी (देखिये 1 कुरूं 7:12–14)। पर अब जो को ऐसा लगता है कि उसके साथ उसको भोजन ग्रहण करना भी छोड़ देना चाहिये।

एक पारिवारिक सदस्य जिसको चर्च ने बर्खास्त किया है उसके साथ बाकि परिवार जनों को कैसा व्यवहार करना चाहिये?

निर्णय

एक गुप्त सभा में, एक अगुवे ने जो को समझाया कि वह बाइबल के आधार पर उससे प्रेम करने, सेवा करने, और उसकी पत्नी की देखभाल करने के लिये बाध्य है यहां तक कि उसके

लिये प्राण भी दे सकता है जैसे मसीह ने अपने चर्च के लिये दिया (देखिये 1 कुरू 7:14–15; इफिसियों 5:25–30)। अगुवे ने स्थानीय चर्च के प्रति उपलब्ध छुटकारा देनेवाले विशेष अनुग्रह को, सृष्टि और सार्वजनिक अनुग्रह, जो विवाह के लिये प्रदान किया गया है, उनमें अंतर स्पष्ट किया। यह तथ्य कि जो की पत्नी चर्च से निकाल दी गयी थी, इससे पत्नी के प्रति विवाह के उत्तरदायित्व पूरे करना निष्प्रभावी नहीं हो जाते।

प्राचीन ने समझाया कि सामान्य रूप में एक अनुशासित परिवार के सदस्य को पारिवारिक जीवन के बाइबल–सम्मत कर्तव्यों को पूरा करना अवश्य है (देखिये इफिसियों 6:1–3;1 तीमु. 5:8)। निश्चित ही इसमें बच्चों को भी माता पिता के साथ बैठकर भोजन ग्रहण करना या पतियों को अपनी पत्नियों के साथ बैठकर भोजन करना शामिल है।

फिर भी चर्च द्वारा बर्खास्ती का आशय है कि जो के उपर एक नया बोझ रखा गया कि उसे अपनी पत्नी के साथ कैसा व्यवहार करना है। पौलुस इन निर्देशों के द्वारा कि चर्च सदस्यों को बर्खास्त लोगों के साथ भोजन की संगति नहीं करना चाहिये, तीन उद्देश्यों की पूर्ति करना चाहता है : मसीही जनों को खमीर रूपी पाप से बचाना; निकाले गये लोगों की इस विचारधारा को बढ़ावा नहीं देना कि चर्च आज भी उन्हें विश्वासी मानता है; समाज में चर्च के प्रति गवाही की सुरक्षा करना। प्रारंभिक कलिसिया में, किसी व्यक्ति के साथ भोजन की संगति उनके साथ सहभागिता, देखभाल और सुरक्षा का प्रतीक होती थी (इसलिये धार्मिक अगुवें यीशु द्वारा पापियों और चुंगी लेने वालों के साथ बैठकर भोजन ग्रहण करने के उपर आपत्ति जताते थे)। पौलुस चर्च सदस्यों को बर्खास्त किये गये सदस्यों के साथ संगति के लिये मना करता था ताकि इससे यह संदेश न जाये कि उनकी परस्पर मसीही संगति है।

इस नजरिये से, जो को अपनी पत्नी के प्रति अपने प्रेम की पुष्टि करने, उससे रूमानी प्रेम रखने और भली भांति उसकी देखभाल करने में अग्रणी बने रहना था पर उसको अपने इस व्यवहार के साथ, इस बात में भी नियंत्रण बनाये रखना था कि उसकी पत्नी यह न सोचने लगे कि उसका पति उसे अभी तक मसीही ही मानता है। इसके स्थान पर पति को चाहिये कि उसे पश्चाताप करने और विश्वास रखने के लिये प्रेरित करे।

भाग 3

प्रारंभ करना

अध्याय 15

इसके पूर्व जब आप अनुशासन सिखाते हैं, शिक्षा दीजिये

माक्र डेवर, एक अनुभवी पास्टर और चर्च अनुशासन के एक जाने माने सलाहकार हैं, जो चर्च अनुशासन पर लेख को इन तीन अप्रत्याशित शब्दों से प्रारंभ करते हैं: "'इसे मत कीजिये।' मैं यह पहली बात पास्टर्स को तब बताता हूं जब वे बाइबल में चर्च अनुशासन को पढ़ते हैं। मैं कहता हूं, इसे मत कीजिये, कम से कम अभी तो मत कीजिये।"'[5]

क्यों कोई व्यक्ति जो चर्च अनुशासन को स्वस्थ चर्च का चिंन्ह मानता हैं, ऐसी सलाह देता हैं? डेवर, पहली बार पास्टर को अनुशासन के बारे में सुनते हुये, देखते हैं। पहले तो, यह विचार पास्टर को ही हास्याप्रद लगता है। परंतु तब वह बाइबल के सारे पदों को देखता है और यह दृढ़ विश्वास उसके भीतर कायम हो जाता है। उसे ऐसा लगने लगता है कि वह एक लापरवाह व्यक्ति है। वह चर्च और मसीह की प्रतिष्ठा की रक्षा नहीं कर रहा है। वह अपनी भेड़ों और गैर विश्वासी पड़ोसियों से प्रेम नहीं रख रहा है। उसकी धारणा और उसके भीतर का पासबानीय दर्शन आगे बढ़ने का निर्णय लेता है। डेवर यह बताते जाते हैं:

इस बिंदु पर एक जिद्दी निर्णय अक्सर आकार लेने लगता है। "मैं इस कलीसिया को बाइबल के निर्देशों का पालन करने तक लेकर जाउंगा, अगर यह अंतिम चीज करनी हुई तो मैं यह भी करूंगा!" अक्सर, ऐसा होता भी है।

बाइबल पर विश्वास करने वाली शांत, नेकनीयत जीवन जीनेवाली, निर्दोष कलीसिया पर चर्च अनुशासन का प्रहार होता है! यह किसी संदेश में सुनने मिल सकता है। यह पास्टर और डीकन की बातचीत में मिल सकता है। यह सदस्यों की सभा में किसी त्वरित क्रियाकलाप के रूप में देखने को मिल सकता है। पर कहीं चर्च अनुशासन बड़ी ईमानदारी और बाइबल के पदों के धारा प्रवाह प्रयोग के द्वारा प्रगट होता है और सही जगह पर कार्य करता है। तब गंभीर कदम उठाया जाता है।

तब, उसकी प्रतिक्रिया आती हैः गलतफहमी होती है और भावनाओं को चोट पहुंचती है। आरोप प्रत्यारोप लगाये जाते हैं। पाप पर प्रहार किया जाता है और उसे बचाये जाने का भी प्रयास होता है। किसी को अपशब्द कहे जाते है। उग्रता बह निकलती है! चर्च के मधुर गान अब कर्णकटु ध्वनि में तब्दील हो जाते हैं। लोग चिल्लाने लगते हैं, ''कब रूकेगा यह प्रलाप?!'' और ''क्या आप सोचते हैं कि यह अच्छी बात है?''[6]

कहानी का सबक यह है कि पास्टर्स जब औपचारिक चर्च अनुशासन पर अमल करना चाहते हैं तो पहले तैयारी स्वरूप प्रारंभिक कदम उठाये जाना आवश्यक है। इस अध्याय में हम इस बात पर विचार करेंगे कि पासबानों को क्या सिखाने की आवश्यकता है। अगले अध्याय में हम कुछ संस्थागत मुद्दों पर बात करेंगे जो सही स्थान पर पहुंचाने के लिये उपयुक्त हैं।

पवित्रता और पश्चाताप के लिये शिक्षा देना

चर्च अनुशासन तभी अच्छे ढंग से कार्य कर सकता है, जब एक कलीसिया को सुसमाचार और मसीही होने की बहुत ठोस समझ हो, जैसा हम ने आमुख में और अध्याय 2 में पढ़ा था।

मसीही होना एक बार का निर्णय नहीं है; यह विश्वास और पश्चाताप के बारे में है जो निर्णयों का पूरा नया ढांचा प्रदान करता है। यह मसीह को प्रभु जानना और उनके प्रति समर्पण करना है।

परमेश्वर चाहता है कि उसके लोग संसार से भिन्न दिखाई दे। वह चाहता है कि लोग पवित्र जीवन जियें और पाप से संघर्षरत बने रहें। पश्चाताप का यही अर्थ है। पश्चाताप का यह अर्थ नहीं है कि व्यक्ति पाप करना बंद कर दिया है, पर इसका अर्थ है उसने पाप के विरूद्ध संघर्ष छेड़ दिया है। एक कलीसिया को इन बातों को समझना आवश्यक है इसके पहले कि चर्च अनुशासन को समझा जा सके।

सदस्यता के बारे में शिक्षा देना

एक चर्च तब तक किसी व्यक्ति को चर्च से *बाहर* करने का इच्छुक नहीं होगा जब तक वह *भीतर* बने रहने और *बाहर* किये जाने के अंतर को नहीं समझेगा। बाइबल स्पष्ट कहती हैः ऐसे भी हैं जो मसीह की देह के ''सदस्य'' हैं (1 कुरूं 12:27) और ऐसे भी हैं जो ''बाहर वाले'' हैं (1 कुरूं 5:12)। अगर एक कलीसिया यह अंतर नहीं समझती है, तो ऐसे में किसी को ''बाहर'' किये जाने का विचार उनको मूर्खतापूर्ण ही लगेगा।

अधिक स्पष्ट रूप से बोले तो चर्च की सदस्यता किसी क्लब की सदस्यता के समान नहीं है या किसी ऐच्छिक संगठन की सदस्यता के समान नहीं है। यह परमेश्वर के राज्य की नागरिकता है जिसमें हम राजा के राजदूतावास के प्रतिनिधि के रूप में पहचाने जाते हैं। वैयक्तिक मसीही को कोई अधिकार नहीं है, एक बार जब वे जान लेते हैं कि वे मसीही हैं,

तो वे संसार के सामने खड़े होकर यह नहीं कह सकते हैं कि मैं स्वयं बपतिस्मा लेने के द्वारा और प्रभु भोज लेने के द्वारा, "देखो, मैं तो यीशु के साथ हूं!" नहीं, उनका ऐसा कहना गलत होगा, क्योंकि चर्च के पास ही राज्य की चाबियां होने के द्वारा वह अधिकार है।

चर्च सदस्यता क्या है? चर्च सदस्यता चर्च द्वारा सार्वजनिक रूप से किसी व्यक्ति के यीशु में विश्वास की पुष्टि करना है और यह उस व्यक्ति का निर्णय है कि वह स्वयं को चर्च की निगरानी में सौंपे। जब आप का चर्च इस बात को समझना आरंभ कर देगा तो चर्च अनुशासन उसके लिये बहुत महत्व रखेगा।

यह लोगों को इस बात को समझने में भी सहायता करेगा कि जब उन्हें चर्च अनुशासन के साथ चेतावनी दी जाये तो उन्हें यह अधिकार नहीं है कि वे सामान्यतः चर्च सदस्यता से त्यागपत्र दे दें। वे चर्च के अधिकार के तहत चर्च में सम्मिलित होते हैं और चर्च के अधिकार से चर्च को छोड़ते हैं।

शिष्यता की शिक्षा देना

जैसे हमने प्रारंभिक अध्यायों में देखा, शिष्यता और अनुशासन दोनों में शिक्षा देना और सुधार करना सम्मिलित है। यह शिष्यता दोनों प्रकार से गुप्त रूप और सामूहिक रूप में होती है।

अतः कलीसिया को यह समझना आवश्यक होगा कि मसीह के शिष्य होने का आशय यह है कि कैसे मसीह के अन्य शिष्यों द्वारा सुधार ग्रहण किया जाये या उनसे शिक्षा ग्रहण की जाये। पास्टर्स को चर्च के सदस्यों को परस्पर संबंध बनाये रखने पर जोर देना चाहिये, जिसमें सुधार किया जाना और निर्देश दिये जाना सामान्य माना जाये। उन्हें यह सिखाया

जाना चाहिये कि एक सुसमाचार में जड़ पाया हुआ व्यक्ति कैसे सुधार का स्वागत करता है और कैसे नम्रता के साथ उसके भीतर सुधार लाया जा सकता है। वृद्ध जन जवानों को सिखा सकते हैं। वृद्ध स्त्रीया जवान स्त्रियों को सिखाए।

जब इस तरह की जिम्मेदारी व्यक्तिगत संबंधों में दिखाई देती है तो औपचारिक चर्च अनुशासन का महत्व समझ में आता है। लेकिन अगर चर्च में ऐसा वातावरण नहीं हो तब चर्च अनुशासन की कार्यवाही सार्थक सिद्ध नहीं होगी।

आत्म–भ्रम पर शिक्षा देना

शिष्यता को हिस्सों में सिखाया जा सकता है क्योंकि हम स्वयं को, जिसमें मसीही जन भी शामिल है, आत्म–भ्रम में रखना पसंद करते हैं। इसलिये प्रेरित बार बार मसीहियों को चेतावनी देते रहते हैं कि ''धोखा न खाओं'' (1 कुरूं 6:9; गला. 6:7; याकूब 1:16)। एक और स्थान पर लिखा है : ''और दुष्ट और बहकाने वाले धोखा देते हुए और धोखा खाते हुए, बिगड़ते चले जाएंगे'' (2 तीमुथियुस 3:13)। यह कहना आसान है कि हममें कोई पाप नहीं है और ऐसा कहकर हम ''स्वयं को धोखा देते हैं,'' यूहन्ना इसे (1 यूहन्ना 1:8) में बताता है। यहां तक कि ऐसे लोगों की इच्छायें भी ''छलपूर्ण'' हैं (इफि. 4:22)।

मसीही जन यह भूल जाते है कि स्वयं को धोखें में रखने के द्वारा वे पहले से ही घमंडी हो गये हैं और वे भी तेजी से फरीसियों के समान स्वधर्मी कहलाने वाले रास्ते पर जा रहे हैं। इसका हल है : अनुशासन को आमंत्रित करो। स्वयं को सुधार के लिये प्रस्तुत करो। डांट–फटकार का स्वागत करो। इस तरह बुद्धिमानी और नम्रता मिलती है।

एक प्रकार से स्थानीय चर्च हमें हमारे अहमवाद से छुटकारा दिलवाते हैं। हमारे आस पास मसीही भाई और बहिन होते हैं जो हम से प्रेम रखते हैं और हमारा भला करने के लिये प्रतिबद्व होते हैं और वे, वह सब देख पाने में हमारी सहायता करते हैं जो हम स्वयं नहीं देख पाते हैं। हम ''स्वयं'' के लिये विशेषज्ञ नहीं हो सकते हैं।

यह वह सबक है जो पास्टर्स को अच्छे समय में हर सप्ताह सिखाना चाहिये, ताकि जब विरोध का समय आए, तो चर्च उसके लिये तैयार रहे।

अनुशासन के लिये शिक्षा प्रदान करना

कलीसिया को चर्च अनुशासन के बारे में सर्वाधिक प्रचलित पदों को जैसे मत्ती 18 और 1 कुरूं 5 को लेकर शिक्षा देनी चाहिये। संदेशों में, छोटे समूहों में, चर्च न्यूज लैटर्स में इस तरह के निर्देशों के लिये स्वाभाविक स्थान है।

पास्टर्स को भी सीखना होगा कि वे कैसे सदस्यता और अनुशासन के संबंध में बाइबल के पदों को (जहां उचित हो) वहां लागू करें। उदाहरण के लिये, पवित्र होने के विषय में 1 पतरस में स्पष्ट तौर पर उल्लेखित है कि कैसे यह व्यक्ति पर लागू होता है, और सामूहिक स्तर पर भी इसे लागू किया जा सकता है: अगर परमेश्वर के लोगों को पवित्र होना चाहिये, तो हमें एक चर्च के रूप में चर्च सदस्यों की, जिन्हें हम चर्च में ग्रहण करते हैं और बर्खास्त करते हैं, देखभाल करनी चाहिये।

या यूहन्ना के सुसमाचार और पत्रियों में से प्रेम के विषय में सीखें जो आज्ञाकारिता की ओर ले जाता है। ऐसे पदों को न केवल व्यक्तिगत परंतु सामूहिक रूप से भी अमल किये जाना

चाहियेः हम चर्च में कैसे अच्छे से परस्पर प्रेम रखना सीख सकते हैं? एक दूसरे को आज्ञा मानने में सहायता करने के द्वारा और जब हम से ऐसा हो पाना संभव न हो तब भी संवेदनशीलता के साथ एक दूसरे को सुधारने के द्वारा हम सहायक सिद्व हो सकते हैं। जब किसी उचित उददेश्य से हम एक अनाज्ञाकारी भाई को सुधारते हैं तो यह भी प्रेमपूर्ण कार्य कहलाता है। क्या आप इसमें विश्वास करते हैं?

वास्तव में, बाइबल मे पवित्रता, पश्चाताप, परिवर्तन, प्रभुता और शिष्यता के उपर किसी भी पद में, भले ही इजरायल को छुड़ाने वाले इतिहास जैसे विस्तृत विषयों को न लिया जाये, अनुशासन व्याप्त है और ऐसे विषयों को अनुशासन की दिशा में लेकर आसानी से अमल किया जा सकता है।

पास्टर्स को भी चर्च सदस्यों को अनुशासन के उद्देश्यों के संबंध में सिखाना चाहिये। चर्चेस को अनुशासन का अभ्यास सजा देने या प्रतिशोध के कारण नहीं बल्कि सुसमाचारिय प्रेम के कारण करना चाहिये। हमने अध्याय 1 में देखा कि अनुशासन कैंसर के समकक्ष कहलाये जाने वाले पाप को सुधारता है, बड़े न्याय के प्रति चेतावनी देता है, पापी को बचाता है अन्य चर्च सदस्यों को बचाता है और मसीह के लिये एक भली गवाही प्रस्तुत करता है – ये सब प्रेम पूर्ण गतिविधियां कहलाती हैं।

प्रेम रखने की शिक्षा प्रदान करना

इस प्रकार चर्च अनुशासन मूलतः प्रेम का विषय है। प्रभु जिनसे प्रेम करता हैं उनकी ताड़ना भी करता हैं (इब्रानियों 12:6)। यह उनके चर्च के लिये भी सत्य है।

समस्या यह है कि वर्तमान में अधिकतर लोग प्रेम का भावनात्मक पक्ष देखते हैं : वह प्रेम जो किसी को विशिष्ट महसूस करवाता है। या प्रेम का उनका नजरिया रूमानियत वाला प्रेम होने से है: न्याय के अधीन जाये बगैर स्वयं को प्रगट करना। या प्रयोग में लिये जाने वाला नजरिया होता है : अपने हिसाब से उपयुक्त बैठने वाले प्रेम को ढूंढ लेना। एक आम धारणा जो प्रचलन में है कि प्रेम का संबंध सच्चाई, पवित्रता व अधिकार से कम होता है।

परंतु वह बाइबल में पाये जाने वाला प्रेम नहीं है। बाइबल का प्रेम पवित्र है। इसकी कुछ मांगें होती हैं। यह आज्ञाकारिता चाहता है। यह बुराई से प्रसन्न नहीं होता परंतु सत्य से आनंदित होता है (1 कुरू 13:6)।

यीशु कहते हैं कि अगर हम उनकी आज्ञाओं को मानेंगे, तो हम उनके प्रेम में बने रहेंगे (यूहन्ना 15:10)। यूहन्ना कहते हैं कि अगर हम मसीह के वचन को मानते हैं तो परमेश्वर का प्रेम हममें सिद्व होता जाता है (1 यूहन्ना 2:5)। कैसे चर्च सदस्य एक दूसरे को मसीह के प्रेम में बने रहने में सहायता करते हैं और परमेश्वर के प्रेम की सिद्वता को आपस में देख पाते हैं? एक दूसरे को आज्ञाकारी होने व वचन मानने में सहायक होने के द्वारा। निर्देश देने और सुधारने के द्वारा।

चर्च अगर बाइबल के प्रेम को समझता है तो वह भली प्रकार से चर्च अनुशासन को भी समझ पायेगा।

अध्याय 16

अनुशासन के पहले, संगठित करें

चर्च अनुशासन के अभ्यास के लिये किसी चर्च को तैयार करने में शिक्षा से बढ़कर कुछ और बातों की आवश्यकता होती है। इसमें कुछ संगठनात्मक बदलाव की भी आवश्यकता होती है। मैं चार संगठनात्मक मुद्दों पर बात करना चाहूंगा।

चर्च के दस्तावेज व्यवस्थित रखें

कुछ चर्चेस के अपने नियम होते हैं। कुछ के संविधान होते हैं। कुछ के विश्वास कथन होते है और कुछ में चर्च की वाचायें होती हैं। चर्च में जैसी भी व्यवस्था हो, पश्चिमी संदर्भ में चर्चेस अपने सदस्यों को दस्तावेजों के द्वारा यह निश्चय करवाता है (1) विश्वास और आचरण के संबंध में सदस्यों से क्या आशा है; (2) कैसे चर्च अधिकार के मामले में बुनियादी बनावट कार्य करती है; (3) सामान्य परिस्थितियों में सदस्यों को कैसे ग्रहण करना और उन्हें बर्खास्त किया जाना; (4) कैसे चर्च अनुशासन असाधारण परिस्थितियों में कार्य करता है।

यह दयालुता का कार्य है जो लोगों को यह जानने में सहायता करेगा कि अनुशासित किये जाने के पहले किन स्तरों पर उनकी जिम्मेदारी है। विश्वास का कथन उन्हें यह जानने देता है कि उनसे किस प्रकार के विश्वास रखे जाने की अपेक्षा है। वाचा यह बताती है कि कैसा जीवन जीने की उनसे अपेक्षा की जाती है। संविधान यह बताता है कि कैसे सदस्यता और अनुशासन कार्य करता है।

ऐसे दस्तावेज एकता को बढ़ाते हैं। दस्तावेज पर सहमति होने से चर्च में जब भी व्यवस्था या नियमों के उपर वाद विवाद होता है तो इस स्थिति से बचाव होता है।

उचित वैधानिक नींव डालना

इस मुकदमेंबाज समाज में चर्च के दस्तावेजों को व्यवस्थित रखना चर्च अनुशासन के अभ्यास में उचित वैधानिक नींव रखने में सहायता करता है। तब चर्च अनुशासन के मामले में चर्चेस को मुकदमें में सफलता मिलती है।[7]

ऐसी याचिकाओं से सुरक्षित रहने के लिये सबसे प्रभावशाली तरीकों में से एक यह है कि बाइबल की सुस्पष्ट नीतियों को आधार के रूप में ठहराना ताकि ये विस्तारपूर्वक बता सकें कि अपश्चातापी सदस्यों के उपर कैसे अनुशासन लागू किया जा सकता है। किसी याचिका के प्रति सबसे सुरक्षात्मक कदम है कि पहले से उस विषय पर सबको जानकारी हो ताकि सहमति बन सके। चर्च को कोर्ट में यह सिद्व करने में सक्षम होना चाहिये कि जो व्यक्ति गलत की शिकायत कर रहा है, वह चर्च की नीतियों और तरीकों को पहले से ही जानता है और उनसे बंधे होने के लिये बाध्य है।

चर्च के संविधान अथवा नियमों में अनुशासन की स्पष्ट समझ पैदा करने के अलावा, चर्च को चाहिये कि चर्च सदस्यता की कक्षाओं में अनुशासन की प्रक्रिया को भी स्पष्ट रूप में समझायें।

पीसमेकर मिनीस्ट्रीज् इस मसले पर एक सर्वश्रेष्ठ संसाधन है : www.peacemaker.net

चर्च की सदस्यता–पंजी व्यवस्थित रखें

चर्च अनुशासन के लिये आवश्यकता है कि चर्च को यह पता होना चाहिये कि उसके सदस्य *कौन कौन* हैं। कुछ सालों पहले मेरे एक मित्र ने मध्य पूर्व के एक अंतर्राष्ट्रीय चर्च में वरिष्ठ पास्टर का पद ग्रहण किया। जब वह वहां पहुंचा, छः सौ लोग उपस्थित थे, परंतु उनके नाम सदस्यता पंजी में दर्ज नहीं थे। एक पुरानी फोन निदेशिका थी जिसमें कुछ सौ नाम दर्ज थे और उससे अधिक कुछ नहीं। उसने मुझसे उस स्थिति का बयान ऐसे कियाः "हम नहीं जानते थे कि हम कौन थे।" न तो वह और न ही अन्य कोई यह जानता था कि कौन संगठन के प्रति जिम्मेदार समझा जायेगा। चर्च प्रचार के मामले में विश्वसनीय था। बपतिस्मा, प्रभु–भोज और चर्च अनुशासन के मामले में चर्च अपने कार्य भली प्रकार से कर रहा था।

परंतु क्या हो अगर मेरे मित्र ने अनुशासनात्मक कारवाई को लेकर मामला दर्ज दिया हो? यह प्रक्रिया अनेक स्थानों पर बिखर जाती हैः संबंधित व्यक्ति कहता है कि वह तो चर्च के अधीन नहीं है; अन्य चर्च अगुवे इस बात पर सहमत हो सकते हैं; और दूसरे सदस्य यह जानते ही नहीं है कि क्या वे निर्णय देने के लिये भाग ले सकते हैं या नहीं ।

दूसरे चर्चेस में मेरे मध्य पूर्व के मित्र के साथ हुई समस्या से अलग एक समस्या है। उनके पास जो औपचारिक सदस्यता सूची है वह उपस्थिति को पार कर चुकी है – तीन सौ उपस्थिति; पंजी में दर्ज, एक हजार। जब ऐसा मामला हो, तो अनुशासन को ईमानदारी से

अमल में लाना मुश्किल है। कैसे एक व्यक्ति को गैर हाजिर रहने के लिये चर्च अनुशासित कर सकता है जब कि ऐसे 699 सदस्य और भी हैं?

संक्षिप्त में, चर्च अगुवों द्वारा, अधिकतर परिस्थितियों में, अनुशासन पर अमल लाने के पहले चर्च सदस्यता पंजी को व्यवस्थित करना आवश्यक है। सदस्यों की सूची में वे ही नाम होना चाहिये जो चर्च में साप्ताहिक स्तर पर उपस्थित रहते हैं (बेशक एकांतप्रिय, व सेना के सदस्य जो कर्त्तव्य स्थल पर हैं, वे अपवाद हो सकते हैं)।[8]

अगुवों की सहमति सुनिश्चित करना

अंततः, यह महत्वपूर्ण है कि चर्च अनुशासन के मुद्दे पर संपूर्ण चर्च अगुवे सिद्वांत को लेकर और अनुशासन को अमल में लाने के द्वारा सभा में एकमत पाये जाये। अगर एक पास्टर या अगुवा संचालन करता है और दूसरे पीछे जा कर बैठ जाते हैं क्योंकि उन्हें उस सिद्वांत को लेकर या उसको अमल में लाने पर संशय है, तो निश्चित ही चर्च की फूट सामने आयेगी। इसलिये, एक पास्टर को संपूर्ण चर्च को, जैसे हमने पिछले अध्याय में सीखा था, अनुशासन के बारे में बातें सिखाना आवश्यक है, निश्चित ही उसे अपने साथी अगुवों को भी ये बातें सिखाना आवश्यक है।

जब चर्च में किसी सदस्य के उपर अनुशासनात्मक कार्यवाही करने का अवसर आता है तो ऐसे अवसरों पर एक व्यक्ति अपने समझदार अगुवों के साथ जो उसके समान ही धारणा रखते हैं, कंधे से कंधा मिलाकर खड़े होना चाहेगा।

निष्कर्ष

क्या आप प्रारंभ करने के लिये तैयार हैं? एक पास्टर की जांच सूची

जब चर्च के पास्टर्स जिन्हें मैं नहीं जानता हूं, मुझसे पूछते हैं कि क्या उन्हें अनुशासन के लिये आगे बढ़ना चाहिये, मैं उनसे पूछता हूं कि वे विस्तारपूर्वक स्थिति को बतायें। परंतु मैं उनकी जांच सूची को भी देखता हूं जिसमें वे उपशीर्षक लिखे हुए मिलते हैं जो पिछले दो अध्यायों में हमने देखें हैं। फोन पर या व्यक्तिगत मुलाकात में मैं विशेषकर इन प्रश्नों को पूछता हूं:

अनुशासनात्मक कार्यवाही के लिये एक पास्टर की जांच सूची

शिक्षण

(1) क्या आप की कलीसिया को सुसमाचार की समझ है जिसमें पश्चाताप करना, आज्ञा मानना सम्मिलित है और मसीह की प्रभुता के प्रति सम्मान पाया जाता है?

(2) क्या आप का चर्च सावधानीपूर्वक सदस्यता का अभ्यास करता है? क्या आप का चर्च अपने अधिकारों को लेकर सजग है और विश्वसनीय बने रहने में एक दूसरें के प्रति जिम्मेदार ठहरता है? क्या चर्च के सदस्य व्यक्तिगत स्तर पर भी चर्च के प्रति अपने उत्तरदायित्व का निर्वाह करते हैं?

(3) क्या वे यह समझते हैं कि मसीही शिष्यता में निर्देश और सुधार दोनों सम्मिलित हैं?

(4) क्या वे समझते हैं कि वे स्वयं को धोखे में रखने के आदी होते हैं और परमेश्वर ने प्रेमवश और बुद्विमानी पूर्वक दूसरे मसीहियों को अपने राज्य की उद्देश्यपूर्ति के लिये उनके जीवन में रखा है?

(5) क्या आपने चर्च को चर्च अनुशासन के बारे में सिखाया है? एक बार, या अनेक अवसरों पर सिखाया है? क्या दूसरे शिक्षकों को भी यह सिखाने का अवसर प्राप्त हुआ है, चाहे संडे स्कूल में या अन्य छोटे समूहों में? क्या चर्च अनुशासित किये जाने को बाइबल पर आधारित समझता है?

ढांचा

(6) क्या आप के चर्च के दस्तावेज अनुशासन के अभ्यास की तस्वीर प्रस्तुत करते हैं? क्या सदस्यों को यह सिखाया गया है कि उनसे नियमों के पालन किये जाने की अपेक्षा है, जब वे चर्च की सदस्यता लेते हैं? क्या उन्हें यह सिखाया गया है कि अगर विश्वास के कथन को लेकर किसी बात पर उनका मन बदलता है तो उन्हें किसी अगुवे से बात करना चाहिये? क्या वे यह अच्छी तरह से जानते हैं कि बाइबल के सिद्वांतों के अनुसार रहने के लिये जिम्मेदार समझे जायेंगे?

(7) इसका अर्थ है, कि क्या आप के चर्च में उचित वैधानिक नींव डाली गयी है – क्या सबकी सहमति इसमें सम्मिलित है?

(8) क्या आप की सदस्यता पंजी प्रगट करती है कि आप रविवार को किन लोगों को प्रचार कर रहे हैं?

(9) क्या आप के साथी अगुवें अनुशासन को समझते हैं, इसके साथ सहमत होते हैं और इसे महत्वपूर्ण समझ कर ग्रहण करते हैं?

विशेष स्थिति

(10) क्या यह पहली बार है कि चर्च अनुशासन का अभ्यास कर रहा है, क्या यह अपेक्षाकृत साधारण मामला है? कहने का आशय है कि क्या वह व्यक्ति जो यीशु का प्रतिनिधि कहलाता है, उसके पाप के प्रति प्रश्न खड़े किये गये हैं और संपूर्ण चर्च गंभीरतापूर्वक उसके पाप के प्रति सहमत बना हुआ है?

परिशिष्ठ

गलतियां जो एक पास्टर अनुशासन का अभ्यास करने में करता है

पास्टर्स कभी कभी औपचारिक चर्च अनुशासन को लागू करने के मामले में निम्नलिखित गलतियां करते हैं।

(1) वे अपनी कलीसिया को चर्च अनुशासन क्या है और उन्हें क्यों इसका अभ्यास करना चाहिये, यह सिखाने में असफल रहते हैं।

(2) वे अर्थपूर्ण सदस्यता का अभ्यास करने में असफल रहते हैं, सफल सदस्यता में ये बातें शामिल होती हैं (1) सदस्यता प्रदान करने के पहले लोगों को सदस्यता की मांग के बारे में सिखाना; (2) जो आकस्मिक तौर पर आते हैं उनको सदस्यता लेने के लिये समझाना; (3) जो सदस्यता लेना चाहते हैं उनमें से प्रत्येक के साथ बातचीत करना; (4) संपूर्ण भेड़ों को नियमित देख रेख प्रदान करना; और (5) सदस्यता सूची को अद्यतन रखना जिससे यह प्रगट हो कि कौन साप्ताहिक सभाओं में आता है।

(3) वे अपनी कलीसिया को बाइबल में वर्णित परिवर्तन के बारे में शिक्षा देने में चूक जाते हैं, विशेषकर यह नहीं बता पाते कि पश्चाताप करने की आवश्यकता है।

(4) वे नये सदस्यों को यह सिखाने में असफल रहते हैं कि चर्च अनुशासनात्मक कार्यवाही भी कर सकता है, और कोई इस कार्यवाही से बचने के लिये त्यागपत्र दे तो यह वैध नहीं माना जायेगा।

(5) वे चर्च के लिये तैयार किये गये दस्तावेज जैसे (बॉयलोज, संविधान, कलीसिया निर्माण की नियमावली इत्यादि) जिनमें चर्च अनुशासन का भी उल्लेख होता है, को भली भांति तैयार नहीं रखते हैं, जिससे चर्च को वैधानिक जोखिम उठाना पड़ता है।

(6) परिस्थिति अनुसार वे मत्ती 18 या 1 कुंरू 5 का अनुसरण करने में असफल रहते हैं। मत्ती 18 में दर्शाये अनुसार, वे पाप को व्यक्तिगत स्तर पर उसके बोध करवाये जाने में चूक जाते हैं।

(7) वे औपचारिक अनुशासनात्मक कार्यवाही करने में शीघ्रता दिखाते हैं, या तो दोषी व्यक्ति के पैर इस मामले में घसीटने में या तेजी से निर्णय पर पहुंचने में।

(8) अनुशासनात्मक कार्यवाही कीये जाना क्यों आवश्यक होती है, वे कलीसिया को पर्याप्त ढंग से यह सिखाने और इसका वर्णन करने में असफल रहते हैं।

(9) वे कलीसिया के सामने उस पाप विशेष का वर्णन इतने विस्तार से करेंगे, जिसके लिये वे अनुशासनात्मक कार्यवाही करने जा रहे हैं, इससे संबंधित व्यक्ति के घर के सदस्यों को शर्म का सामना करना पड़ता है और जो कमजोर भेड़ें हैं वे भटक सकती हैं।

(10) वे चर्च अनुशासन की प्रक्रिया को पूर्ण रूपेण वैधानिक प्रक्रिया मान कर उस अपश्चातापी जन की देखभाल के लिये बिल्कुल थोड़ी गुंजाइश रखते हैं।

(11) विभिन्न प्रकार के पापियों के बीच अंतर होता है, वे इस अंतर पर थोड़ा ध्यान देते हैं और ठीक से नहीं देख पाते कि कैसे इसका प्रभाव चर्च पर पड़ता है जब अनुशासन के विभिन्न स्तरों से होते हुये प्रक्रिया पूरी होती है (देखिये 1 थिस्सु 5:14)।

(12) वे भूल जाते हैं कि वे सुसमाचार द्वारा प्रदान किये गये अनुग्रह के द्वारा जीवित हैं और इसीलिये वे स्वयं को स्व धार्मिक समझते हुये अनुशासनात्मक कार्यवाही को संपन्न करते हैं। इन गलतियों को करने से दूसरी व्यवहारिक गलतियां जैसे बेहद रूखापन और वाणी में कटुता उपजती है।

(13) वे पापी से वास्तव में प्रेम करने में असफल रहते हैं..... वे प्रभु से यह विनती नहीं करते कि संबंधित जन को पश्चाताप करने का मन दे।

(14) वे सुलगती हुई बाती से या कुचले हुये सरकंडे से बहुत अधिक मांग कर बैठते हैं। दूसरे शब्दों में, उस व्यक्ति से जो पूरी तरह पाप की जकड़न में है, पश्चाताप के लिये मांगे जाने वाला स्तर बहुत उंचा होता है।

(15) वे कलीसिया को उचित ढंग से उस अपश्चातापी पापी के साथ कैसा व्यवहार किया जाये, ऐसे निर्देश देने में असफल रहते हैं, जैसे सामाजिक परिस्थितियों में कैसे उसके साथ ताल मेल बिठाये और कैसे उसे पश्चाताप के लिये तैयार करें।

(16) वे अनुशासनात्मक कार्यवाही के अधीन जन को चर्च की आराधना में बुलाने में असफल रह जाते हैं जहां वह परमेश्वर के वचन को निरंतर सुन सके (यह विश्वास करते हुये कि वहां किसी प्रकार की अपराधिक हानि नहीं होगी)। इसके साथ ही वे चर्च को यह सूचित करने में

चूक जाते हैं कि प्रत्येक को अनुशासन के अधीन व्यक्ति के लिये आशा रखना चाहिये ताकि वह निरंतर चर्च आता रहे।

(17) वे अनुशासनात्मक कार्यवाही का नेतृत्व करने की संपूर्ण जिम्मेदारी एक व्यक्ति अर्थात वरिष्ठ पास्टर के कंधे पर रख देते हैं, तो इस तरह चर्च में ऐसा संदेश जाता है कि व्यक्तिगत तौर पर वरिष्ठ पास्टर संबंधित व्यक्ति से बदला ले रहे हैं।

(18) वे कलीसिया के जीवन में पर्याप्त रूप से अगुवों को सम्मिलित करने में चूक जाते हैं, जिससे अगुवे भेड़ों की अवस्था से वाकिफ नहीं होते हैं। औपचारिक रूप से इसमें असफलता मिलना, चर्च की सुधारात्मक अनुशासन की योग्यता को कमजोर बनाती है।

(19) वे साप्ताहिक स्तर पर परमेश्वर का वचन सुनाने में असफल रहते हैं।

(20) वे कलीसिया को प्रतिशोध की भावना से किसी अनुशासन के मामले को देखे जाने के लिये अनुमति देते हैं, बजाय उन्हें इस बात के लिये प्रेरित करने के, कि वे प्रेमपूर्ण बने रहकर अपश्चातापी जन को, परमेश्वर के आने वाले दंड के लिये चेतावनी दे।

(21) वे बाइबल को आधार बनाकर अनुशासन को अमल में लाना नहीं चाहते हैं (ताश खेलना, नृत्य करना इत्यादि)

(22) वे बजाय उस व्यक्ति का भला करने के, चर्च की भलाई करने के, समाज की भलाई और मसीह की महिमा करने जैसे कारणों के अलावा और किसी कारण से अनुशासन को अमल में लाना चाहते हैं।